TEXT CUT WITHIN THE BOOK ONLY

TEXT FLY WITHIN THE BOOK ONLY

THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL LIBRARY

OU_178843

UNIVERSAL LIBRARY

दोषी कौन ?

(समाजिक उपन्यास)

लेखक:--

श्री देवीप्रसाद धवन 'विकल'

प्रकाशक—

विनोद पुस्तक मन्दिर

— आगरा —

द्वितीय बार] सन् १९५० [मूल्य २)

प्रकाशक--
विनोद पुस्तक मन्दिर,
हास्पिटल रोड, आगरा।

मुद्रक—
कैलाश प्रिंटिंग प्रेस,
बागमुजफ्फरखाँ, आगरा।

कथानक की बात

व्यक्ति से समाज बनता है, अतएव समाज की भूल व्यक्ति की भूल है। हम जिन भूलों का दोष समाज पर मढ़ते हैं उसका दोष किस पर मढ़ा जाय? यह समस्या बिकट है।

इसी भावना को लेकर मैं यह ढूंढ़ने बैठा कि दोष कहाँ है और दोषी कौन है? जब व्यक्ति से समाज बनता है तो दोष भी व्यक्ति ही का होगा—समाज को कोस कर अलग बैठ जाने का समय गया, अब तो हमें व्यक्ति को पकड़ना है। इस उपन्यास में उस व्यक्ति को मैं पकड़ सका हूँ या नहीं, यह मैं नहीं कह सकता। हां, सम्भव है, आप उसे पा जायं और समझ सकें कि दोषी कौन है? मेरा श्रम तभी सफल होगा।

रही उपन्यास-लेखन-कला की बात। शैली और भाषा साहित्य की वस्तु है और उसका सीधे समाज से कोई सम्बन्ध नहीं है मैं इतना अवश्य कह दूं कि मैं उपदेशक नहीं हूँ;. मेरा अभिप्राय: उपन्यास द्वारा पाठकों को उपदेश देना या उनके सामने किसी प्रकार का आदर्श रखना नहीं है और मैं इस योग्य हूँ भी नहीं समाज में जैसा भी कुछ देखता हूँ उसका चित्रण करना ही अपना कर्तव्य समझता हूं। यही कारण है कि मेरा लक्ष्य कथानक ही रहता है। उपन्यास-लेखन-कला के उपर्युक्त भाग को ही मैं अधिक महत्व देता हूँ। हाँ, यदि शैली और भाषा भी पाठकों की सुरुचि के अनुकूल है तो मेरा अहोभाग्य!

विनीत—

देवीप्रसाद धवन 'विकल'

(१)

लखनऊ में आकर शीला बड़ी प्रसन्न हुई। साफ सुथरी सड़कें, भव्य अट्टालिकायें, मधुरवाणी तथा सुन्दर वेष-भूषा में विचरण करता हुआ नर नारियों का समूह देखकर वह बोली—'जीजाजी, वास्तव में लखनऊ युक्त-प्रान्त का स्वर्ग है।'

हँसकर दिवाकर ने कहा 'तो हम लोगों को भी तुम देवता से कम न समझती होगी।'

शीला बोल उठी 'निसंदेह। विशेष तौर से आपको।'

दिवाकर बोला 'अब तुम भी देवी बन जाओगी यहाँ रह कर शीला। यहाँ की देवियाँ ही स्तुत्य हैं, देवताओं को तो कोई टके सेर भी नहीं पूछता।'

शीला हंसकर चुप हो गई। अपने पाँच वर्ष के भानजे सुधाकर की अँगुली पकड़े हुए शीला दिवाकर के साथ अमीनाबाद पार्क में जाकर बैठ गई और बोली 'ओफ कितना थक गई। यहाँ तो घूमने से जी नहीं भरता।'

दिवाकर मुस्करा कर बोला 'और जब घूमने वाले भी अच्छे हों तो और भी आनन्द आ जाता है शीला।'

शीला हँसती हुई बोली 'अब तो आप बनाने लगे मुझे जीजाजी! मैं तो कोई खास अच्छी भी नहीं हूँ।'

दिवाकर बोला 'व्यक्ति को अपनी विशेषता स्वयं अनुभव नहीं होती। दूसरे ही की दृष्टि का निर्णय मानना ही इसमें अनिवार्य हो जाता है।'

शीला मुसकरा कर चुप हो गई। दिवाकर ने कहा 'तुम्हारे लिये गर्ल्स कालेज में स्थान मिलने में जितना श्रम मुझे करना

पड़ा था वह सब मैं भूल गया। इस शुष्क वातावरण में आकर तुमने सरसता ला दी। तुम्हारी जीजी तो……………

बात बदलने की नीयत से शीला बोल उठी 'यहाँ से तो उठने का जी ही नहीं चाहता। चारों ओर ऐसा जगमग-जगमग हो रहा है जैसे दीवाली हो।'

दिवाकर चुप रहा। उसने पहिले भी कई बार बनारस में शीला को देखा था और बातचीत भी की थी; किन्तु उसे आज सदा की अपेक्षा शीला में कुछ अधिक आकर्षण मालूम हुआ।

समय हो चुका था। सुधाकर भी घर जाने की जल्दी मचा रहा था। शीला बोली 'अब चलें, फिर कभी इधर का चक्कर लगेगा।'

मार्ग में धोके से भी शीला का स्पर्श दिवाकर को भला मालूम हुआ। पता नहीं शीला ने क्या अनुभव किया।

उर्मिला कुछ मुंह बनाये बैठी हुई थी। इन लोगों को देख कर बोली 'चलो लौटें तो।'

शीला बोल उठी 'तुम्हारा लखनऊ तो बड़ा अच्छा है जीजी।'

शीला की बात अनसुनी सी करती हुई उर्मिला बोली 'और तुमसे कहती हूं कि अब ढील मत डाल देना। कल ही शीला के लिये सारा प्रबन्ध हो जाना चाहिये। घूमने से काम न चलेगा।'

दिवाकर मुसकरा कर बोला 'जैसी आज्ञा। कहिये अभी प्रिंसिपल के घर चला जाऊं ?'

उर्मिला स्वभानुकूल गम्भीर होकर बोली 'मुझे व्यर्थ की हँसी अच्छी नहीं लगती। मैं तुम्हारा स्वभाव भली-भाँति जानती हूं। कहते सब कुछ हो किन्तु किये कुछ नहीं होता।

शीला पास ही खड़ी हुई थी. बोली 'मगर कालेज खुलने में

तो अभी ७-८ दिन बाकी हैं जीजी। अभी से वहाँ जाकर क्या करेंगे जीजाजी।'

उर्मिला मुंह बनाकर बोली 'तुझे क्या मालूम इनकी आदत शीला! इनसे काम लेना तो मैं ही जानती हूं अगर अभी से इनके पीछे न पडूंगी तो यह हिलने वाले भी नहीं हैं।'

दिवाकर बोला 'और अगर कभी मैं झूठमूठ भी इनके पीछे पड़ जाऊं तो फौरन मुंह फुलाकर बैठ जायँगी। मैं भी इनका स्वभाव जान गया हूँ शीला।'

कहकर दिवाकर मुस्करा दिया। शीला बात बदलने की नीयत से बोली 'मगर लखनऊ तो गजब का सुन्दर है जीजी।'

उर्मिला बोली 'अब तू यहाँ पढ़ने के लिये आई है सो उसमें अपना मन लगा। घूमने-घामने से कोई पास नहीं हो जाता।'

शीला मुस्करा कर चुप हो गई। दिवाकर ने कहा 'मैंने मिलकर सब बातें तय कर ली हैं। प्रिंसिपल महोदया यों तो जरा रूखे स्वभाव के हैं किन्तु उन्होंने शीला को भरती कर लेने का वचन दे दिया है।"

उर्मिला बोली 'अब बढ़ बढ़कर बातें मत मारो। जब जगह होगी तो प्रिंसिपल को भरती करना ही पड़ेगा। इसमें तुमने कौन सा कमाल कर दिया?'

बहस करना व्यर्थ समझकर दिवाकर चुप हो गया।

शीला बोल उठी 'जीजी बड़ी जल्दी नाराज हो जाती हैं।'

उर्मिला ने एक बार उसकी ओर देखा और चुप हो गई। दिवाकर मन-ही-मन प्रसन्न हुआ।

शीला हंसकर बोली 'और जीजाजी बेचारे डरते भी बड़ी जल्दी है। जीजाजी..............

बात काटकर उर्मिला बोल उठी 'तू बहुत मत बोल शीला।

छोटे मुँह बड़ी बातें नहीं की जातीं। चल, खाना तैयार है, खा ले।'

शीला कुछ खिसिया सी गई।

(२)

दिवाकर के पिता कुशाग्र बुद्धि के थे। आज से सात वर्ष पूर्व जब बनारस के कुशल व्यवसायी पं० रामशंकर वाजपेयी अपनी ज्येष्ठा पुत्री उर्मिला के विवाह का प्रस्ताव लेकर आये तो उन्होंने कह दिया कि 'अन्तिम निर्णय तो दिवाकर की स्वीकृत के बाद ही होगा। किन्तु मैं इस प्रस्ताव से असहमत नहीं हूँ।

वाजपेयी जी बोले 'तो फिर मैं.................

बात काटकर वे बोले 'मैं चेष्टा करूँगा।'

वाजपेयी जी जानते थे कि पं० गंगाधर अवस्थी बात के आदमी हैं, अतएव चुपचाप काशी लौट गये।

दिवाकर ने उसी वर्ष बी० ए० पास किया था। वर्षों से वह किसी पढ़ी लिखी एवं सुन्दरी लड़की को अपना चिरसाथी बनाने की कल्पना करता आया है। उर्मिला अद्वितीय सुन्दरी थी किन्तु शिक्षा के नाम पर लगभग शून्य ही सा था साधारण रूप से हिन्दी जानती थी। दिवाकर ने जो यह सुना तो फौरन अस्वीकार कर दिया।

पिता ने कहा 'लड़कपन की बात मत करो दिवाकर। मैंने यद्यपि रामशंकर जी को वचन दिया है फिर भी अपनी स्वीकृति के लिए तुम स्वतन्त्र हो। साथ ही साथ तुम्हें मेरी एक आज्ञा माननी पड़ेगी। मेरी बात रखने के लिए तुम एक बार उनकी कन्या को देखने चले जाओ, उसके बाद मैं उन्हें लिख दूँगा कि दिवाकर को लड़की पसन्द नहीं आई।

अनुभव-शून्य दिवाकर पिता की बातों मे आ गया ; वह उर्मिला को देखने के लिये झट बनारस चल दिया।

पिता ने जो सोचा था वही हुआ। काशी से लौटकर कुछ झेंपते हुए दिवाकर ने विवाह की स्वीकृति दे दी। पिता अपनी सफलता पर मुस्करा दिये विवाह हो गया।

उर्मिला की सुन्दरता पर दिवाकर दीवाना हो गया, किन्तु जितना ही वह झुकता गया उतना ही उर्मिला उसे दबाती गई। पहिले तो उसे उसका रोष भी प्यार मालूम दिया किन्तु परिणाम यह हुआ कि दोनों मे अनबन होने लगी। सहन की भी एक सीमा होती है, अतएव एक दिन दुःखी होकर दिवाकर कह ही तो बैठा 'सुन्दरी होने के साथ ही साथ यदि तुम कहीं शिक्षित भी होतीं तो..................

ज़ोर से चिल्लाकर उर्मिला बोली 'तो फिर कोई पढ़ी लिखी ले क्यों नहीं आते ? अरमान न बाकी रह जाय।'

दिवाकर धीरे से बोला 'तुम तो व्यर्थ की बात करती हो उर्मिला। जिस बात को तुम नहीं समझतीं..............

उर्मिला उसी प्रकार बोली 'मैं तो मूर्ख हूँ। क्यों मेरा दिमाग़ चाटते हो ? हे भगवान्, मैं तो मर जाऊ ....

और वह रोने लगी। दिवाकर उठकर चुपचाप बाहर चला गया। सात आठ दिन तक उर्मिला दिवाकर से बोली नहीं।

इस प्रकार की घटनायें दोनों के बीच में महीने में एक दो बार अवश्य हो जाया करतीं। दिवाकर सोचता कि आख़िर उसका क्या दोष है ? वह चाहता था कि उर्मिला उसके साथ शिक्षितों की सी वेश भूषा मे घूमने निकले, किन्तु उर्मिला कह देती 'मुझे इन बातों के लिये व्यर्थ का समय नहीं है। मैं जब पढ़ी लिखी नहीं तो फिर मेम साहबों की तरह क्यों तुम्हारे साथ घूमने चलूँ ?'

दिवाकर कुढ़कर मुँह बना लेता। अधिक कुछ कहता तो उर्मिला लड़ाई ठान लेती। दिवाकर सार्वजनिक कार्यों में भाग लेता था, उर्मिला इसे व्यर्थ का समय नष्ट करना समझती। किसी भी संस्था को चन्दा देते देखकर वह मुँह बना लेती; कहती 'इसी प्रकार तो तुम व्यर्थ में रुपया फूँकते हो।'

वह कहता 'तुम इन बातों को नहीं समझतीं उर्मिला। न जाने इनसे कब अपना काम निकल आये ?'

उर्मिला मुँह बनाकर कहतीं 'तुम से ज्यादा ही समझती हूं।

और वह बे बात की बात पर ३-४ दिन तक कुढ़ी सी रहती

अन्त में परेशान होकर दिवाकर ने बहुत सी संस्थाओं को छोड़ दिया। वह समझ ही न पाता था कि वह किस प्रकार का व्यवहार उर्मिला से करे। माता तो पहिले ही मर चुकी थी, पिता का देहान्त होते ही उर्मिला घर की मालकिन बन गई थी। इस प्रकार का जीवन चल रहा था और घर मे उर्मिला ही का एक छत्र राज्य था।

हाँ, उर्मिला को जब पति से कोई काम निकालना होता था तो वह अत्यन्त ही सरल स्वाभाव की बन जाया करती थी।

उस दिन हँसते हुए उसने कहा 'कहो तो शीला को यहां बुलालूं ? वह यहाँ कालेज मे पढ़ना चाहती है।"

दिवाकर आज उसके प्रसन्न होने का अर्थ समझ गया था। कुछ सोचकर बोला 'मैं क्या मना करता हूं।'

उर्मिला जरा मुँह बनाकर बोली 'तबियत न हो तो मना कर दूँ। इस प्रकार मुंह बिचका कर कहने का मतलब ?

दिवाकर हंसकर बोला 'तुम्हारे जो जी में आता है कह पड़ती हो। बहिन तुम्हारी है, उसे यहां बुलाने से रोकने वाला मैं कौन ?'

उर्मिला बोल उठी 'मेरी ही बहिन है और कदाचित तुम्हारी तो वह कोई है नहीं ।'

जरा मुस्कुरा कर दिवाकर ने कहा 'मेरे लिये तो जैसी तुम वैसी शीला । बुला लोगी तो मुझे भी दर्शन होते रहेंगे ।'

सिर हिलाकर उर्मिला बोली 'जरा मुंह धो रखना । वह जरा कड़े स्वाभाव की हैं, उसे ज्यादा दिल्लगी मजाक पसन्द नहीं ऐन्ट्रैन्स पास है ना ।'

मन ही मन में दिवाकर ने कहा 'आखिर है तो तुम्हारी ही बहिन, किन्तु प्रकाश्य में कहा 'तो फिर क्या मुझसे लड़ेगी भी शीला ?'

उर्मिला स्फुट-स्वर से बोली 'हमारा तो घर का घर लड़ाका है, फिर ऐसों से क्यों सम्बन्ध किया ।'

दिवाकर खड़ा होते हुए बोला 'फिर तुम लड़ाई की तैयारी करने लगीं ? अभी कल ही हमारा तुम्हारा मेल हुआ है ।'

और उर्मिला वास्तव में मुंह फुलाने लग गई थी, किन्तु न जाने क्या सोचकर मुस्कुरा दी । बोली 'तो फिर लिखदूं बाबू जी को ? कालेज में सीट मिल जायगी ना ।'

दिवाकर बोला 'मिल क्यों न जायगी ।'

इस प्रकार शीला लखनऊ आ गई ।

वह थी :

उर्मिला से बिल्कुल भिन्न स्वभाव वाली । अधिक सुन्दरी न होते हुए भी उसके चेहरे से सरलता टपकती थी । वह कम बोलने वाली थी किन्तु उसकी वाणी मे मादकता सी छलकती थी । बात करती तो मुस्कुराते हुए—सभी का मन उससे बात करने को चाहता था । शिक्षार्थी होने के कारण उसके रहन सहन का ढङ्ग भी आकर्षक था । वह अशिक्षितों से बातचीत करना कम पसन्द करती, घर के काम-काज में भी उसकी विशेष अभि-

रुचि न थी। उसका जी चाहता रहता था कि वह घूमे फिरे, शिक्षा सम्बन्धी चर्चा में भाग ले तथा लोगों से मिले-जुले सफाई के साथ रहना, नित्य नई साड़ी बदलना, शृङ्गार की वस्तुओं की अभिलाषा रखना, स्वयं प्रसन्न रहना और दूसरों को प्रसन्न रखना उसके स्वभाव में था। आमोद-प्रियता तथा महत्वाकाँक्षा की वह क्रीत दासी थी। वह बिना किसी नियम उपनियम की परिधि की चिन्ता के ही प्रत्येक प्रकार के आमोद-प्रमोद में भाग लेती। इस सम्बन्ध की किसी भी बात को वह बुरा न समझती।

दिवाकर ने शीला मे सभी कुछ पाया जो वह उर्मिला में पाने की आशा करता था। यह भाग्य ही का परिहास था। हम जिस ऊँची वस्तु को पाने की अभिलाषा रखते है उसे अयोग्य व्यक्ति के पास देखकर कुँठित हो उठते हैं। प्राय: विद्वान की स्त्री मूर्खा और मूर्खा का पति विद्वान देखा गया है; सुन्दर की पत्नी असुन्दर और कुरूप की भार्या अधिक सुन्दरी देखकर भाग्य ही को दोष देना पड़ता है। हम जिस वस्तु को पाना चाहते हैं प्राय: वह हमको नहीं मिलती और न चाहने वाले के पास उसका ढेर लग जाता है। कैसी भयानक विडम्बना है। कैसा भीषण भाग्य का परिहास है!!

ज्यों-ज्यों दिवाकर शीला में इच्छित अभिलाषाओं का केन्द्रीकरण देखता गया त्यों-त्यों उसके हृदय में एक गढ़ा सा बनता गया। वह जानता था कि शीला मे चरित्र की महानता का वह उच्चादर्श नहीं है जो उर्मिला में। वह जानता था कि उर्मिला के रूखे स्वभाव तथा अनावश्यक असहयोग मे अन्तरहित है एक कुटुम्ब-हित की भावना, किन्तु वह क्या करे? प्रति दिन के जीवन में हमको अवकाश कहाँ कि हम आदर्शों पर अपने को बलिदान करते रहें। मनुष्य तो हृदय से बल पाता है और बल का जनक है अतृप्त आकांक्षा का तृप्तीकरण। मनुष्य जब तृप्त

होता है तो उसकी क्रियात्मक शक्तियाँ बढ़ जाती हैं। अतृप्त आकांक्षा तो अभिशाप है।

और दिवाकर तो था मस्त स्वभाव का; शान्तिरूप जीवन का पुजारी मानिनी का भक्त नहीं हो सकता। आजकल, जब से शीला लखनऊ आगई है तब से वह एक अलग ही दुनिया में रहता है। अच्छी अच्छी पुस्तकें शीला को लाकर देता और स्वयं पढ़ता तथा उसी पुस्तक के विषय को लेकर शीला से घण्टों वाद विवाद करता—कभी राजनैतिक चर्चा छिड़ जाती और कभी साहित्यिक। शीला को भी इसी बात का व्यसन था, वह भी प्रसन्न रहती। कभी-कभी उर्मिला भी पास आ बैठती किन्तु अधिक ज्ञान और दिलचस्पी न होने के कारण वह थोड़ी ही देर में ऊब जाती तथा जाकर सो रहती।

सहसा एक दिन शीला दिवाकर से पूछ बैठी 'सुना है बहिन से आपकी खटपट भी हो जाती है जीजा जी ?'

हँसकर दिवाकर बोला 'ऐसी बात तो नहीं है शीला स्वभाव में थोड़ी भिन्नता होने के कारण कभी-कभी वे ही उत्तेजित हो जाती हैं। मुझपर तो उनकी अटूट श्रद्धा है।'

शीला क्षणभर रुक कर बोली 'इसमें उनका दोष नहीं है। वे बेचारी पढ़ी-लिखी तो हैं नहीं, सीधी सादी गृहस्थ हैं।'

मुस्कुरा कर दिवाकर बोला 'किन्तु बीत जाती है मेरे ऊपर। इतनी जल्दी रुष्ट हो जाती हैं कि कुछ पूछो नहीं। हाथ पैर जोड़ कर मनाना पड़ता है देवी जी को।

शीला मुस्कुरा कर गम्भीर हो गई। वह जानती थी कि जीजा जी बहिन से कितना स्नेह करते हैं और कितना सम्मान करते हैं उनका। कितना अन्तर है इनमें और जीजी में। एक सर्वगुण सम्पन्न, शिक्षित, स्वस्थ तथा सुन्दर तथा दूसरा अपढ़, उग्र तथा सांसारिक ज्ञान से कोरा। कितना त्याग है

जीजा जी का ?'

वह बोली 'आप बहिन का सम्मान करते हैं इसके लिए उन्हें कृतज्ञ होना चाहिए।'

दिवाकर बोला 'मैं उनका आदर करता हूं और जानता हूं कि वे हृदय की कितनी साफ़ और सरल हैं।'

शीला चुप हो गई। दिवाकर बोला 'चलो आज सिनेमा देख आयें शीला। सुना है 'अछूत-कन्या अच्छा फ़िल्म है।'

शीला को क्या इन्कार था ? बोली 'चलिये। बहिन को भी दिखा लायें।'

'हाँ हाँ. तुम उनसे कह देना' कहता हुआ दिवाकर अपने कमरे की ओर चल दिया।

शीला का अनुरोध उर्मिला न टाल सकी। तीनों सुधाकर को लेकर फ़िल्म देखने गये।

शीला श्वेत रङ्ग की सुन्दर सी साड़ी पहिने हुए थी। सिर से पैर तक सजी हुई, ऊँची एड़ी का जूता पहिने तथा हाथ में पर्स लिए हुए वह बड़ी अच्छी लग रही थी।

उर्मिला सादी किनारेदार धोती पहिने थी। उसकी यह वेश-भूषा दिवाकर को अच्छी न लगी। एक लम्बी सांस लेकर वह बोला 'क्या पास में कोई साड़ी न थी।'

उर्मिला फीकी सी हँसी हँस कर बोली 'कौन साड़ी के झंझट में पड़ता। किसी को दिखाना थोड़े ही है।'

दिवाकर मन ही मन झल्लाकर रह गया। मन में सोचने लगा 'इस मूर्ख स्त्री को नहीं मालूम कि इसने अपने स्वभाव में पड़कर मेरे जीवन के सारे सुनहरे स्वप्नों को नष्ट कर दिया।' वह चुप रह गया।

इन पंक्तियों के लेखक की सहानुभूति भी दिवाकर के साथ है। प्रायः पुरुष एक विशेष प्रकार के आकर्षण को स्त्री में पसन्द

करता है; वह चाहता है कि उसकी पत्नी उसके मनोनुकूल वस्त्र पहिने, शृङ्गार करे तथा आकर्षण वस्तुओं का प्रयोग करे। उसका मन इसी प्रकार की स्त्री ढूँढ़ता है और सर्वप्रथम वह अपनी पत्नी ही में इस प्रकार की स्त्री का रूप देखना चाहता है। इसके विरुद्ध पत्नी कभी इस बात पर ध्यान भी नहीं देती कि आखिर उसके पति की रुचि क्या है ? उदाहरणार्थ पुरुष जब हारा थका घर लौटता है तो वह भोजन की सजी सजायी थाली की अपेक्षा सजी सजायी पत्नी को अधिक पसन्द करता है। उस समय विकृत वेष मे, मलिन वस्त्र पहिने, शृङ्गार-विहीन पत्नी को देखकर उसका मन कुण्ठित हो जाता है। पत्नी की यह भयंकर भूल कहना चाहिए। इस प्रकार वह पति के प्रेम में स्वयं शिथिलता लाती है जिसका परिणाम कभी कभी बड़ा भयानक होता है इससे प्रायः पुरुष अपने मार्ग से हट जाता है और किसी भी सजीसजायी तथा मनोनुकूल परस्त्री को देखकर पाप का मार्ग ग्रहण करने पर विवश हो जाता है। उसे तो इच्छित आकर्षण स्त्री में चाहिए—चाहे वह अपनी पत्नी हो या अन्य स्त्री। यदि स्त्री ऐसा नहीं करती तो फिर यह दोष किसका है ? स्त्री तो विवाहित जीवन प्रारम्भ होते ही शीघ्र ही मातृत्व की कल्पना और भावना में लग जाती है। पत्नीत्व के प्रति उसका राग जागता है भी तो केवल लघुकाल के लिए। इसके विपरीत पुरुष वृद्धावस्था तक भी पुरुषत्व का दावा करता रहता है। वह अपने को कभी वृद्ध नहीं समझता; कहने का तात्पर्य यह है कि उसकी आकांक्षा लम्बी अवधि तक तृप्त नहीं होती। यदि पत्नी का असहयोग प्रारम्भ काल ही से उसे प्राप्त होता है तो फिर उसका पथ-भ्रष्ट हो जाना लगभग सम्भव तथा निश्चित है।

दिवाकर जितना ही शीला को देखकर प्रसन्न हो रहा था उतना ही उर्मिला को देखकर कुढ़ता था। शीला कुछ-कुछ उसके

मनोभावों को समझ रही थी ।

'इण्टरवेल' में दिवाकर ने आइस क्रीम का आर्डर दिया। बैरा तीन प्लेट आइस क्रीम ट्रे मे सजाकर ले आया । एक प्लेट उर्मिला की ओर बढ़ाते हुए दिवाकर ने कहा 'लो'

उर्मिला धीरे से बोली 'मैं नहीं खाऊँगी । इसमें न जाने क्या क्या पड़ता है ?'

दिवाकर मुस्कुरा कर बोला 'अरे यह आइस-क्रीम है भली-मानुस । इसमें और कुछ नही पड़ता ।'

उर्मिला बोली 'ना भाई, मैं न खाऊँगी ।

दिवाकर ने मुँह बना लिया ।

शीला बोली 'खा लो जीजी । इसमें कुछ नहीं है ।'

उर्मिला सिर हिलाते हुए बोली 'ना बाबा । तू ही खा ।'

शीला और दिवाकर खाने लगे ।

खाते-खाते शीला बोली 'इसमें तो सिर्फ दूध रहता है । जीजी व्यर्थ ही में इन्कार करती हैं ।

धीरे से दिवाकर बोला 'पागलों के कहीं नाक पूँछ होती हैं।

उर्मिला चुप रही ।

शीला ने दिवाकर की ओर देखा । दिवाकर धीरे से मुस्कुरा दिया ।

(३)

दिवाकर आराम कुर्सी पर लेटा हुआ गुनगुना रहा था । शीला आकर बोली 'आज आपको पकड़ पाया है । चुपचाप सुना डालिये अपनी कविता । मैं सुन चुकी हूं कि आप सुन्दर सुन्दर रचनायें भी किया करते हैं ।'

हँसकर दिवाकर ने कहा 'मेरी कविता तो मर चुकी शीला ।'

शीला जरा गम्भीर होकर बोली 'वेदना ही तो कविता का आधार होता है । हृदय की टीस ही में कवि के भाव उत्पन्न होते हैं।

दिवाकर बोला 'किन्तु........'

शीला बोल उठी 'अब बातों में न टालिए। आज आपको एक कविता सुनानी ही पड़ेगी ।'

एक निश्वास लेकर दिवाकर बोला 'कोई नई कविता तो लिखी नहीं, कहो पुरानी रचना सुना दूं ।'

शीला मुस्कुरा कर बोली 'वाह, पुरानी रचना ही में तो कवि की प्रारम्भिक प्रवृत्ति का आभास झलकता है । भले ही उस काल की कविता का स्वर ऊंचा न हो, किन्तु भावों का प्राबल्य एवं बाहुल्य तो बाँध तोड़ कर निकलता दिखलाई पड़ता है । अच्छा फिर सुना तो डालिए !

दिवाकर क्षणभर रुक कर कहने लगा:—

दिन जीवन के हैं बीत रहे।
प्रति क्षण के इस परिवर्तन में वैराग रहे या प्रीत रहे।
पर जीवन के दिन बीत रहे ॥
विस्मृति के अङ्कों पर सोकर हम विषम वेदना भूल रहे।
पट पर से उन्हें हटा करके अपने भावों में भूल रहे।
इन संघर्षों में क्या जाने हम हार रहे या जीत रहे।
पर जीवन के दिन बीत रहे ॥
हम चले किधर थे, चले किधर, अब चलें किधर, क्यों चलें किधर ?
जीवन की यही समस्या है विश्राम नहीं हम को पलभ र।
यों जीवन के दिन बीत रहे ॥

शीला मुस्करा कर बोली 'क्या मैं इसे कवि की वास्तविक स्थिति का स्पष्टीकरण समझूं ?'

दिवाकर बोला 'मैं कवि नहीं हूं शीला, और न मेरी कोई वास्तविक स्थिति है। मैं अपनी वर्तमान स्थिति से संतुष्ट ही हूँ।

क्षण भर चुप रह कर शीला बोली 'अब आपकी वास्तविकता मुझसे छिपाये न छिपेगी। मैं क्या आपकी वेदना समझ नहीं पाई जीजाजी ?'

किंचित मुस्करा कर दिवाकर बोला 'तुम गलत समझ रही हो शीला। मैं तुम्हारी बहिन से जरा भी असन्तुष्ट नहीं हूं।'

शीला बोली 'जितना ही मैं आपके विषय में सोचती हूँ उतना ही आपको ऊँचा पाती हूं। वास्तव में आपका हृदय बहुत विशाल है जीजाजी।'

सिर हिलाकर दिवाकर ने कहा 'अब तुमने मुझे बनाना शुरू कर दिया शीलाजी। यह बात·········'

शीला बोल उठी 'आप जो कुछ भी कहें, किन्तु मैं यह कहूंगी कि उर्मिला जीजी के समान विरली ही स्त्री भाग्यशालिनी होगी।'

हँसकर दिवाकर बोला 'और मेरे समान ?'

शीला चुप रही। दिवाकर बोला 'और मेरे समान भी कम भाग्यशाली पुरुष होंगे जिन्हें तुम्हारी जैसी विदुषी से दिन भर बात करने का सौभाग्य प्राप्त होता है।'

और ये शब्द उर्मिला के कान में पड़े। वह दिवाकर को भोजन के लिए बुलाने आ रही थी। उर्मिला सोचने लगी 'क्या इनका और शीला का इतना घुलना-मिलना ठीक होगा ?' उसका दिमाग कुछ घूमने लगा।

आज पहली ही बार उर्मिला के हृदय में यह बात आई कि शीला और इनका स्वभाव कितना मिलता-जुलता है। यदि इनका शीला से······

और वह दांतों में ओंठ दबाकर चुप होगई। उसने सोचा

'क्या यह भी सम्भव हो सकता है ? मेरी शीला ऐसी नहीं है और न ये।.........तो फिर........

उर्मिला बार बार सन्देह को हृदय से निकाल फेंकना चाहती थी, किन्तु अब तो कीटाणु जन्म ले चुका था।

कितना अच्छा होता यदि उर्मिला और भी कुछ सोच सकती ?

और उसी दिन दिवाकर के मन मे प्रथम बार यह आया कि शीला से विवाह करके वह कितना सुखी होता ? किन्तु बेचारी उर्मिला !

उसका हृदय एकाएक उर्मिला के प्रति स्नेह तथा दया से भर गया। अच्छा होता यदि उर्मिला इसे समझ सकती।

उस दिन शाम को जब दिवाकर घर लौटा तो उर्मिला बोली 'शीला के लिये कुछ साड़ियाँ खरीद दो न ?'

दिवाकर बोला 'इतनी साड़ियाँ तो हैं शीला के पास। अभी से इतना शौक करके क्या होगा ?'

उर्मिला बोली साड़ियाँ हों कितनी हैं उसके पास ? अब क्या पिताजी की उतनी आमदनी रह गई है जो बच्चो का मन रख सकें। बेचारे (आंखों मे आँसू भर कर) किसी प्रकार अब तो निर्वाह कर रहे हैं।'

दिवाकर बोला 'यह तो समय की बात है नहीं तो पूछो उसके पास था क्या नहीं ? ईश्वर सबकी मदद करता है।'

और उसी दिन दिवाकर ने बाजार ले जाकर शीला को ३–४ साड़ियाँ खरीद दीं।

उर्मिला ने सन्दूक से रुपये निकाल कर दिवाकर की ओर बढ़ाते हुए कहा 'ये लो साड़ियों के दाम।'

दिवाकर बोला 'क्या आप दाम दे रही हैं मुझे ?'

उर्मिला बोली 'मैं क्या दे रही हूं ? बाबूजी की तरफ से दाम

दे रही हूं।'

दिवाकर बोला 'उनसे साड़ियों के दाम माँगते क्या तुम्हें अच्छा लगेगा ? तुम्हीं दे दो न ?'

उर्मिला दिवाकर के हाथ में नोटों को रखते हुए बोली 'न-न-न, बाबूजी कदाचित् यह बात पसंद नहीं करेंगे। वे इतने थोड़े ही गिर गये हैं जो बच्चों को कपड़ा न पहिना सकें।'

दिवाकर उर्मिला का मुँह देखने लगा। उर्मिला बोली 'और मुझे भी यह बात पसंद नहीं है। मैं उनसे रुपये मांग लूंगी।' 'हिसाब जौ-जौ बखशीश सौ-सौ।'

\+ \+ \+

उस दिन पानी बरस रहा था और शीला के कॉलेज में छुट्टी थी। उर्मिला ने कहा 'दशहरे की छुट्टियों में बनारस हो आ शीला। मेरी भी इच्छा बाबूजी से मिलने की थी मगर........

शीला बोल उठी 'तो फिर चलो जीजी। जीजाजी भी साथ चलें तो बड़ा आनन्द रहे।'

उर्मिला बोली 'उनका क्या ठीक है ? जैसी सनक उठ आई।'

शीला 'वे जरूर चलेंगे। मैं आज कहूँगी।'

उर्मिला बोली 'अच्छा कह कर देखना।'

रात के वक्त उर्मिला ने पति से कहा 'अब की दशहरे की छुट्टियों में चलो बनारस हो आयें।

थोड़ी देर चुप रह कर दिवाकर बोला 'किन्तु कदाचित् मैं न जा सकूं।'

भौंहों पर बल डालते हुए उर्मिला बोली 'क्यों ? आपको कहां ड्यूटी देनी है ?'

दिवाकर बोला 'साहित्य-मन्दिर का उत्सव होने वाला है छुट्टियों में। इसके अतिरिक्त दो-एक दिन के लिए कानपुर भी जाने का इरादा कर रहा हूँ।'

उर्मिला चुप हो गई। दिवाकर बोला 'इसमें बुरा मानने की बात नहीं है।'

स्फुट स्वर से उर्मिला बोली 'मैं कौन हूँ बुरा मानने वाली ? मैं तो पहिले ही से जानती थी कि यही उत्तर मिलेगा।

दिवाकर बोला 'यह तुम्हारा भ्रम है उर्मिला। अगर तुम यही चाहती हो तो मैं चलने को तैयार हूँ।'

'न-न न, अब तो मैं कहीं जाने के लिए कभी कहूंगी भी नहीं' कहती हुई उर्मिला पंलग पर लेट गई।

दिवाकर कुछ झल्ला सा गया था, बोला 'मैं जितना तुम्हारा मन रखता हूँ उतना ही तुम मुझे शर्मिन्दा करना चाहती हो यह आदत तो तुम्हारी अच्छी नहीं है। बिना किसी बात के मुँह बना लेना ठीक नहीं।

उर्मिला जरा चिल्ला कर बोली 'मेरी तो सभी आदतें खराब हैं, फिर तुम खराब आदमी से बात क्यों करते हो ? मैं बुरी, मैं बुरी, मैं लाखों में बुरी !

और वह आँचल से आँसू पोंछने लगी। दिवाकर बोला 'मैंने कुछ कहा भी हो उर्मिला ? मैं तो चलने को तैयार भी हो गया था किन्तु तुम तो दूसरे को कुछ कहने ही नहीं देना चाहती हो।

उर्मिला रोती हुई बोली 'संसार में मेरे अतिरिक्त तुम्हारे लिए सभी अच्छे हैं। मैं मर जाऊं तो तुम्हारा पीछा छूटे।

दिवाकर चुप रहा। वह जानता था कि जितना ही वह बोलेगा उतनी ही बात बढ़ती जायगी।

उर्मिला फिर बोली नहीं। दिवाकर थोड़ी देर चुप रह कर बोला 'बस नाराज हो गईं ?

उर्मिला आवेश में हाथ जोड़ती हुई जोर से बोली 'बस माफ करो बाबा। जैसा कहा वैसा फल पाया। मैं तो कहना

ही न चाहती थी ।'

दिवाकर चुपचाप पलंग पर लेट गया ।

वह सोचने लगा 'मेरा भी क्या जीवन है ? सोचा था विवाह के बाद पत्नी के सामने अपना प्रेम उंडेल कर रख दूंगा किन्तु उर्मिला तो………………न जाने क्या इसे हो गया है ! जी चाहता है कहीं चला जाऊँ कुछ दिनों के लिए………… किन्तु फिर स्वयं उर्मिला का क्या हाल होगा ! मैं तो इसे कष्ट देना चाहता नहीं……………किन्तु इस प्रकार कहाँ तक………… शीला ही समझदार है । यह सब शिक्षा का अभाव है ।'

वह सो गया ।

+ + + +

शीला ने कहा 'आपको बनारस चलना पड़ेगा जीजाजी ।'

कुछ सोच कर दिवाकर बोला 'अच्छा चलूँगा ।

दिवाकर ने सोचा कि अब इंकार करता हूं तो उर्मिला और भी बिगड़ जायगी । इस तरह शीला के अनुरोध से कदाचित वह चली भी चले ।'

शाम के वक्त उर्मिला और दिवाकर के सामने ही शीला बोली 'जीजा जी भी चलने को तैयार हो गये हैं बहिन ।

उर्मिला ने आँख उठा कर पति की ओर देखा और नीचा सिर कर के बोली 'मैं नहीं आऊंगी ।'

दिवाकर चुप रहा । शीला आश्चर्य के साथ बोली क्यों जीजी !

उर्मिला चुप रही । शीला ने बहिन का हाथ पकड़ कर कहा 'क्यों न चलोगी बहिन !

उर्मिला हाथ छुड़ाते हुए बोली 'तुम्हीं दोनों चले जाना । मैं न जाऊंगी ।

शीला बोली यह तो बात ठीक नहीं है बहिन । तुम्हीं ने तो

चलने की बात उठाई थी।

उर्मिला बोली 'तू मेरा दिमाग मत चाट। तुम दोनों का जो जी चाहे करो मुझसे मत बोलो।

शीला को बात लग गई। वह कमरे में जाकर तकिये से मुँह छिपा कर रोने लगी।

उर्मिला कहने को तो कह गई किन्तु उसे गलती का अनुभव हुआ। दिवाकर ने कहा तुम्हारा तो स्वभाव ही कड़ी बात कहने का हो गया है।

उर्मिला चिल्ला कर बोली 'तुम लोग क्यों मेरे पीछे पड़े हुए हो। हाय भगवान;

और वह रोने लगी। दिवाकर चुपचाप जूते पहिन कर बाहर चला गया।

शीला दिन भर कमरे मे पड़ी रही। कई बार उर्मिला ने उसे भोजन के लिए पुकारा किन्तु वह उठी नहीं।

शाम के वक्त जब दिवाकर खाने बैठा तो उर्मिला ने कहा 'शीला ने सबेरे से भोजन नहीं किया है। जाकर बुला लाओ न!'

दिवाकर ने आँख उठा कर उर्मिला की ओर देखा और चुपचाप खाने लगा। भोजन के पश्चात् वह घूमने के लिए निकल गया।

उर्मिला धीरे से शीला के पास गई और बोली 'तू खाना क्यों नहीं खाती शीला! मुझे ये तेरी बातें अच्छी नही लगतीं।

शीला रोते रोते बोली मैं नहीं खाऊंगी।

उर्मिला धीरे से बोली 'मैंने तो तुझसे कुछ कहा नहीं रानी। वह तो साधारण सी बात थी।,

शीला चुपचाप रोती रही। उर्मिला ने उसे हाथ पकड़ कर

उठाते हुए कहा 'तुझे मेरी कसम है शीला तू चल कर खाना खा ले।,

शीला स्फुट स्वर से बोली 'मैं नहीं खाऊंगी जीजी। मुझे बनारस भेज दो, मैं अब यहां किसी प्रकार भी नहीं रहूंगी।

उर्मिला बोली 'क्या बहन की बात न मानोगी! शीला बोली नहीं।,

उर्मिला बोली 'क्या भोजन न करोगी!

शीला बोली नहीं।

उर्मिला चुप रही। शीला आँसू पोंछती हुई बोली 'मैं कल चली जाऊंगी बनारस। इसमें तुम्हारा दोष नहीं है जीजी। दूसरों के घर जाकर रहने में इस तरह की बातें सुननी ही पड़ती हैं।

उर्मिला ने कदाचित् आज अनुभव किया कि उसने कोई गलती की है। उसने सोचा कि उसे ऐसी बात न कहनी चाहिए थी।

थोड़ी देर तक उर्मिला चुप बैठी रही, फिर शीला के पैर पकड़ कर बोली मुझे माफ कर दे शीला। अब मैं जीवन रहते तुझे कुछ न कहूंगी। मैं बहुत बुरी हूं।

उर्मिला रोने लगी। शीला ने उससे चिपटते हुए कहा 'ऐसा न कहो बहिन। तुम बड़ी हो मैंने तो कभी तुम्हें बुरा कहा नहीं।,

उर्मिला चुपचाप रोती रही। शीला भी रो रही थी। थोड़ी देर बाद उसका हाथ पकड़ कर उर्मिला बोली 'चल' खाना खा ले। यदि तू न खायगी तो मुझे बड़ा बुरा लगेगा।

शीला ने चुपचाप जाकर भोजन कर लिया।

उर्मिला ने कहा 'अब तो बनारस जाने का नाम न लेगी शीला। देख, मुझे यह बात बहुत बुरी लगी है।

शीला मुस्कुरा दी।

उर्मिला भी मुस्कुरा उठी।

(४)

फिर कोई बनारस नहीं गया। उर्मिला भी कुछ दिनों से शान्त थी। इधर दिवाकर भी कुछ दिनों के लिए व्यवसाय के सम्बन्ध में बम्बई चला गया।

बम्बई से लौट कर दिवाकर अपने एक मित्र प० रामनारायण से मिलने गया। रामनारायण से उसकी घनिष्ठ मित्रता थी तथा दोनों बाल्यकाल्य ही से एक दूसरे पर अटूट विश्वास रखते थे। रामनारायण साहित्य प्रेमी थे किन्तु लेखक न थे।

दिवाकर को देख कर रामनारायण बोले तुमने तो इधर आना ही छोड़ दिया। दिवाकर क्या भाभी जी के प्रति अनुराग बहुत बढ़ गया।,

हँस कर दिवाकर बोला 'ऐसी बात नहीं है। भाई। इधर बम्बई चला गया था और उसके पहिले कुछ अन्य झंझटों में फंसा रहा।

रामनारायण बोले 'बम्बई से कब आये !'

दिवाकर बोला 'अभी कल ही तो लौटा हूं। मैं तो पहिली ही बार बम्बई गया था, किन्तु भाई गजब का शहर है !'

रामनारायण सिर हिलाते हुए बोले 'मैं तो कई बार हो आया हूं। सागर तट पर स्थित 'मैरीन-लाइन्स' का दृश्य तो अति ही मनोरम है। मैं तो मालाबार हिल्स पर स्थित 'हैंगिग गार्डन' से मैरीन लाइन्स तक रोज ही आता जाता था। कभी चित्त नहीं ऊबता।

दिवाकर बोला 'मेरा भी मन वहाँ खूब लगा। जल्दी आना

था नहीं तो और कुछ दिन रुकता।

थोड़ी देर तक दोनों चुप रहे। रामनारायण बोले 'इधर कुछ लिखा हो तो सुनाओ न !'

कुछ समय तक टालमटूल करने के बाद दिवाकर बोला 'इधर कुछ अधिक लिखा तो नहीं किन्तु फिर भी एक छोटी सी रचना सुनाता हूँ।'

हँस कर रामनारायण बोले 'किन्तु जरा संगीत का भी पुट हो। तुम्हारा स्वर तो मधुर है ही।

दिवाकर रचना पढ़ने लगा:—

एक तारा देखता हूँ।
बस उसी मे पथ-प्रदर्शन का सहारा देखता हूँ।
एक तारा देखता हूं।
मैं कहाँ ढूँढूँ किधर है आज परिचित भूल मेरा।
इस अपरिचित से जगत में कौन है अनुकूल मेरा।
अब इसी प्रतिबिंब ही मे विश्व सारा देखता हूं।
एक तारा देखता हूं।
आज विस्मृति के पटल पर खिंच गई जो एक रेखा।
उस सुनाविक को उसी में उस तरणि के साथ देखा।
आज जीवन के अगम जल मे किनारा देखता हूं।
एक तारा देखता हूं।
एक मैं हूं, एक तुम हो, एक 'जीवन' एक बन्धन
एक क्रम से नाचता है विश्व का सारा नियंत्रण
और जीवन के सलिल मे एक धारा देखता हूं।
एक तारा देखता हूं।

रामनारायण बोल उठे 'बहुत सुन्दर। इतने ऊँचे स्तर की रचना तुम कब से करने लगे दिवाकर !'

दिवाकर बोला 'साधारण से भाव हैं। अब आप भी तो

कुछ कृपा कीजिये।

रामनारायण बोले 'मैं तो कुछ लिखता नहीं।

दिवाकर ने कहा 'गा तो लेते हो। किसी और कवि की ही सही।

क्षण भर चुप रह कर रामनारायण बोले 'इधर मैंने पं० हृदयनारायण पाण्डेय 'हृदयेश" की एक रचना पढ़ी थी। वह मुझे बड़ी सुन्दर प्रतीत हुई। कहो तो सुना दूँ।

'हाँ हाँ 'क्या हर्ज है। हृदयेश जी तो बड़ी सुन्दर कविता लिखते हैं और सुनते भी बड़े रोचक ढंग से है।, दिवाकर बोला

रामनारायण ने सुनाई: |

कितनी दूर किनारा-माँझी ! कितनी दूर किनारा !
पथ-दर्शक बन झांक रहा है
वह जीवन ध्रुव तारा !
मांझी ! मुझे तातो चलना—
कितनी दूर किनारा !
गीत ही जीवन जीवन गीत है—
गीत में लय होजाना !
गीत की गति का अर्थ यही है--
निज अस्तित्व मिटाहा ॥
रवि गतिमय है शशि गतिमय है—
गतिमय हैं सब तारे !
गतिमय लता, प्रसून, तरु, प्रकृति—
खेल खेलती न्यारा ॥
गतिमय अवनि घूमती निशि दिन—
किस प्रिय की गलियों में ?
कितना चल प्रिय ! प्राप्त करेगी—
निज उद्देश्य—किनारा !

कितनी दूर किनारा-मांझी ! कितनी दूर किनारा !

दिवाकर झूम उठा। बोला 'मै तो स्वयं कवितामय होगया इस रचना को सुन कर।

रामनारायण जी बोले 'हृदयेश जी की यह रचना मैं प्रायः गा कर आत्म सन्तुष्टि किया करता हूं। दार्शनिक भावों का प्राबल्य ही इसकी विशेषता है। क्या चाय मँगवाऊं ?'

दिवाकर चाय पीना भी चाहता था, बोला 'मै केवल चाय नहीं पीता। साथ मे कुछ खाने को भी होना चाहिए।'

'हाँ-हाँ' कह कर वे अन्दर चले गये।

दिवाकर अकेला बैठा रहा। थोड़ी देर बाद रामनारायण आकर बैठ गये और बोले 'अभी आता है सामान।'

एकाएक दिवाकर बोल उठा 'कोई सुयोग्य वर हो तो बतलाओ। मुझे अपनी साली शीला के लिये चाहिए।

सिर हिलाते हुए रामनारायण बोले 'इसी उधेड़ बुन मे तो मैं भी पड़ा हूं दिवाकर। रमा भी तो काफी सयानी होगई है।'

रमा रामनारायण की छोटी बहिन थी। दिवाकर बोला 'रमा तो अब २०-२१ वर्ष की होगी ?

रामनारायण बोले '२३ वाँ वर्ष चल रहा है। क्या करें कोई सुपात्र ही नहीं मिलता। गत बी० ए० पास किया है उसने।'

दिवाकर चुप होगया।

थोड़ी देर मे रमा ट्रे में चाय और पकौड़ियाँ लेकर आगई। मेज पर उन्हें रखते हुए बोली 'नमस्ते भाई साहब।'

'नमस्ते, रमा ! कहो अच्छी हो न ?' कहते हुए दिवाकर मेज के पास पड़ी हुई कुर्सी पर बैठ गया।

दोनों चाय पीने लगे। रमा बोली 'कुछ मीठा भी लाऊं ?'

'नहीं-नहीं, मैं मीठे से प्रेम नहीं करता' कहता हुआ दिवाकर

पकौड़ियाँ खाने लगा।

रमा चली गई! दिवाकर सोचने लगा कि रमा कितनी बड़ी होगई है किन्तु अभी तक कोई सुयोग्य वर नहीं मिला इसके लिए? सुन्दरी, सुशिक्षिता और सुसभ्य!'

खाते-खाते रामनारायण बोले 'मैं तो ऐसा वर चाहता हूं जो सुशिक्षित तथा सुयोग्य हो।'

दिवाकर बोला 'आश्चर्य है कि इतनी योग्य कन्या के लिए हमारे समाज में वर का अभाव है।'

पकौड़ी मुँह में रखते हुए रामनारायण बोले 'तुम्हारा एक साला भी तो है। उसका विवाह कहीं ठीक हुआ या नहीं?'

दिवाकर बोला 'उसने अभी गत वर्ष ही तो एम० ए० पास किया है। कहो तो बात करूं?'

रामनारायण बोले 'इसमें भी कोई पूछने की बात है।'

दिवाकर चाय पीने लगा।

जब वह घर लौटा तो मार्ग में बार-बार रमा की आकृति उसके सामने आकर खड़ी हो जाती थी। उसने सोचा कि कितना सुखी होगा उसका जीवन जिसकी यह चिर संगिनी बनेगी।

उसने एक निश्वास ली।

(५)

अवसर पाकर दिवाकर ने एक दिन उर्मिला से कहा 'तुम्हारे भाई सुरेश का विवाह अभी कहीं ठीक हुआ या नहीं?'

झल्ला कर उर्मिला बोली 'पचास मर्तबा कहा सो शीला के विवाह की कहीं बातचीत की नहीं, बस सुरेश के लिये पूछने बैठ गये।'

दिवाकर ने कहा 'शीला के विवाह की ही बात चलाने मैं रामनारायण के पास गया था। बात करते करते वे अपनी बहिन रमा के लिये सुरेश की बात करने लगे।'

उर्मिला बोली 'जब तक शीला का विवाह कहीं तय न होगा सुरेश की बात उठाई न जायगी। उसके लिए पचीसों ठोकर खाते घूम रहे हैं।'

दिवाकर को उर्मिला का यह भाव अच्छा न लगा, बोला 'लड़कियाँ तो सभी की समान हैं उर्मिला। कोई तुम्हारे यहाँ ठोकर खा रहा है तो तुम्हारे घर वालों को भी तो इसी प्रकार ठोकरें खा कर ही शीला के लिए लड़का मिलेगा।'

उर्मिला स्फुट-स्वर से बोली 'तुमसे तो बात करना मुश्किल है। फौरन लड़ने लगते हो। मुझे दुनिया भर की बातों से क्या मतलब? मुझे तो शीला के लिए लड़का चाहिए। तुम्हें बुरा लगता है तो मैं अब कभी इस बारे में बात न करूंगी।'

और वह एक ओर चल दी। दिवाकर अपना-सा मुँह लिये बैठा रहा।

शीला अपने कमरे से सब कुछ सुन रही थी। जब शाम को दिवाकर से उसकी भेंट हुई तो वह बोली 'आप इन सब झगड़ों में क्यों पड़ते हैं जीजाजी मैं तो स्वयं विवाह नहीं करना चाहती।'

दिवाकर कुछ बोला नहीं। शीला बोली 'मैं आपकी हार्दिक व्यथा समझती हूँ। मैं जानती हूं कि स्नेहवश आप जीजी के कितने अत्याचार सहन करते हैं। वे बुरी नहीं हैं किन्तु उनके स्वभाव को क्या किया जाय? आपकी सहनशीलता किसी भी पुरुष में अप्राप्त है।'

दिवाकर क्षणभर रुक कर बोला 'मैं क्या करूं शीला? मैं समझता हूँ कि उर्मिला का स्वभाव अशिक्षा का द्योतक है। मुझे उनके ऊपर भी तरस आता है और अपने ऊपर भी।'

शीला बोली 'कदाचित् जीजी को नहीं मालूम कि मैंने विवाह न करने का दृढ़ निश्चय कर लिया है।'

बिजली की भांति कमरे में घुसते हुए उर्मिला ने कहा 'मैं सब तेरी बातें समझती हूं शीला। जीजाजी को भूल भुलैयों में तू डाल सकती है मुझे नहीं।'

शीला दृढ़ता के साथ बोली 'हाँ हाँ, मैं दृढ़ता के साथ कहती हूँ जीजी कि मैं विवाह नहीं करूंगी। दुनिया में कोई मेरा विवाह नहीं कर सकता।'

उर्मिला चुपचाप चली गई। रात्रि में दिवाकर ने उससे कहा 'तुम क्यों झगड़े में पड़कर दुखी होती हो। शीला कई बार कह चुकी है कि मैं विवाह नहीं करूंगी।'

मुँह बना कर उर्मिला बोली 'विवाह नहीं करेगी तो क्या मिस साहब बनी घूमेगी ? मुझे ये सब चोंचले अच्छे नहीं लगते।'

दिवाकर ने कहा 'तो फिर इसमें किया क्या जा सकता है ? तुम कर ही क्या सकती हो उर्मिला ?'

उर्मिला बोली 'मैं ही जो इस योग्य होती तो यह दिन क्यों देखना पड़ता ?'

दिवाकर कुछ देर चुप रह कर बोला 'किन्तु तुम इतनी जल्दी नाराज़ क्यों हो जाती हो उर्मिला ? यह बात तो ठीक नहीं है। इस प्रकार कैसे जीवन कटेगा। तुम्हे कुछ तो सोचना चाहिये।'

उर्मिला बोली 'तुम्हें ज्यादा परेशान न होना पड़ेगा। मैं बहुत दिनों तक बैठी न रहूँगी—दूसरी को लाकर अपनी साध पूरी कर लेना।'

दिवाकर को मरने जीने की बात से घृणा थी। बोला 'तो क्या मैं तुम्हारा मरना चेतता हूँ ? मुझे इस प्रकार की बाहियात

बातें अच्छी नहीं लगतीं उर्मिला।'

उर्मिला रूखे से मुँह से बोली 'तुम चाहो या न चाहो किन्तु मैं अधिक टिकने वाली नहीं हूं। उस दिन (किंचित मुसकुरा कर) ज्योतिषी जी ने भी मेरी उम्र बहुत कम बतलाई थी।

कुछ क्रुद्ध सा होकर दिवाकर बोला ' इन मूर्ख ज्योतिषियों का नाम मेरे सामने मत लिया करो तुम। इन गधों को ज्योतिष का ज्ञान ही कितना होता है ?'

हंस कर उर्मिला बोली 'ज्योतिषी को भले ही न हो किन्तु मुझे तो है। मैं कहती हूं अभी से तैयारी कर डालो अपने ब्याह की।'

दिवाकर जरा गम्भीर होकर बोला 'तो तुमने इस प्रकार मुझे तंग करने का बीड़ा उठा लिया है उर्मिला।'

उर्मिला बोली 'मैं तो हजार बार कह चुकी कि मैं तुम्हें बहुत दिन तक तंग न करूंगी। शीघ्र ही (हंस कर) कोई पढ़ी लिखी अपनी पसन्द की ले आना।'

दिवाकर चुप होगया। उर्मिला मुस्कुराते पति का हाथ पकड़ कर बोली 'मन में तो मिश्री घुल रही होगी, लेकिन ऊपरी मन से तुम जितना लल्लो-चप्पो कर सकते हो मैं भली भाँति जानती हूं। बोलो ठीक कह रही हूं न ?'

दिवाकर उसका हाथ हटाता हुआ बोला 'हटो जो जी में आता है कह डालती हो। मैं तो ईश्वर जानता है............

और उसकी आँखों में आँसू आगये। उर्मिला कुछ द्रवित होकर बोली 'अरे तो क्या मैं सचमुच मरी जा रही हूं जो रोने लगे।'

उसने आँचल से पति के आँसू पोंछते हुए कहा 'अच्छा नहीं मरूंगी बाबा। चलो खाना तैयार है।'

दिवाकर चुपचाप बैठा रहा।

उर्मिला उठ कर चली गई।

(६)

किन्तु शीला कदाचित् दिवाकर की ओर दिन पर दिन आकृष्ट होती जारही थी। हम कह चुके हैं कि शीला आमोद प्रियता तथा महत्वाकाँक्षा की क्रीत दासी थी। वह दिवाकर ही में अपने सारे इच्छित गुणों को पढ़ चुकी थी। महत्वाकाँक्षिणी सदैव ऐसा पति चाहती है जो उसकी अभिलाषाओं की पूर्ति करने में मूक सेवक हो। शीला ने दिवाकर में यह सब कुछ देखा।

इनके विपरीत दिवाकर ने कभी इस विषय पर कुछ नहीं सोचा। वह शीला को पसन्द करता था किन्तु यह भी जानता था कि उर्मिला के चरित्र मे जो महानता है उसका शीला में सर्वथा अभाव है। उर्मिला के प्रति उसके मन में कभी उदासीनता न आई और न कभी शीला के सम्बन्ध में उसके मन में पाप ही उदय हुआ। वह अब भी उर्मिला का भक्त था।

किन्तु शीला दिवाकर की ओर जितना ही झुकती गई उर्मिला इस विषय को लेकर सशंकित होती गई। यद्यपि वह पति का स्वाभाव समझती थी फिर भी वह जानती थी कि पुरुष तो पुरुष ही है। उसने शीला को यहाँ बुलाकर जो गलती की थी उसको भी अनुभव करने लगी। दिवाकर तो इन सब बातों से बिलकुल ही अनभिज्ञ था। वह शीला से हँसता, बोलता, परिहास करता उसकी टीका-टिप्पणी भी करता। वह न जानता था कि उर्मिला की आँखें इन सब बातों को किस रूप में देख रही हैं। इस विषय में दिवाकर ने कदाचित् सोचा भी नहीं। वह जानता था कि शीला की ओर उसका आकर्षण है

किन्तु उसने कभी उसे इस रूप से नहीं देखा जिस रूप में उर्मिला कल्पना करने लगी थी।

अब न तो कभी उर्मिला उसे छोड़ कर कहीं जाती और न उसे कभी पति के साथ जाने के लिए प्रोत्साहित करती। शीला इस बात को समझ गई थी किन्तु अपना मार्ग बदलना न चाहती थी।

एक दिन शीला ने सिनेमा जाने की तैयारी की। जब सजी सजाई शीला ने बहिन से जाने की आज्ञा मांगी तो वह बोली 'परीक्षा के दिन निकट हैं। अब सिनेमा वगैरा जाने की आवश्यकता नहीं है। घर में बैठकर पढ़ो।'

शीला बोली 'मैं तो जाने की तैयारी कर चुकी हूँ। जीजाजी भी जाने के लिए कह गये हैं।

उर्मिला जाते हुए बोली 'तो फिर जो तुम लोगों के जी में आये करो।'

शीला थोड़ी देर तक खड़ी रही फिर अपने कमरे में जाकर कुर्सी पर बैठ गई और दिवाकर की प्रतीक्षा करने लगी।

दिवाकर ने घर में आते ही कहा 'तैयार हो न शीला।'

शीला उठकर खड़ी होगई। दिवाकर ने कहा 'वाह, तुम तो बिलकुल तैयार बैठी हो।

दोनों सिनेमा देखने चले गये। उनके जाने के बाद उर्मिला बड़ी देर तक रोती रही फिर उठ कर काम करने लगी।

सिनेमा हाउस में शीला ने दिवाकर से कहा 'आज जीजी कुछ नाराज होगईं।

दिवाकर ने पूछा 'क्यों ?'

शीला बोली 'वे नहीं चाहती कि सिनेमा देखने जाऊँ।'

दिवाकर को आश्चर्य हुआ। वह बोला 'उन्होंने क्यों रोका ? क्या कुछ नाराज होगई थीं !

शीला थोड़ी देर चुप रही फिर बोली 'वे आपके साथ मेरा सिनेमा आना कदाचित् पसन्द नहीं करतीं।'

दिवाकर अब भी कुछ समझा नहीं। बोला 'मुझसे तो कुछ कहा नहीं।'

शीला दिवाकर की अनभिज्ञता पर मन ही मन हँसी। बोली 'वे कहेंगी क्या। उन्हें कदाचित् मुझ पर विश्वास नहीं है।'

दिवाकर अब कुछ समझा। बोला 'यह तो निराली सी बात है। इसमें अविश्वास का कारण ही क्या हो सकता है। उर्मिला तो निरी मूर्ख है।

शीला चाहती थी कि दिवाकर इस बात को समझ ले किन्तु वह चुप रही।

दिवाकर चुप बैठा रहा। शीला यदाकदा दिवाकर के कन्धे पर अपना हाथ रख देती किन्तु दिवाकर ने इस बात को कोई महत्व नहीं दिया।

थोड़ी देर बाद दिवाकर बोला 'तुम यहां से लौट कर उनसे बहस मत करना। मैं बात कर लूंगा। वे तो यों ही नाराज हो जाती हैं।

शीला बोली 'मैं उनके नाराज होने की परवाह नहीं करती। मैं किसी से दब कर नहीं रह सकती।

दिवाकर ने शीला के मुंह की ओर आश्चर्य से देखा और बोला 'क्या तुम्हें कुछ कहा है उर्मिला ने !

शीला ने मुस्करा कर कहा 'कहा तो कुछ नहीं है, किन्तु आपके पीछे कदाचित सुनने को आज मिले।'

दिवाकर बोला 'न न न शीला। उनसे लड़ने की आवश्यकता नहीं है। मैं बात कर लूंगा।

क्षण भर चुप रह कर शीला बोली 'यदि मुझे कुछ कहेंगी

तो सुनेंगी भी। मेरी जो इच्छा होगी करूंगी वे बोलने वाली कौन हैं!

दिवाकर चुप रह गया।

जब घर लौटे तो उर्मिला पलंग पर लेटी हुई एक उपन्यास पढ़ रही थी। शीला अपने कमरे में जाकर कपड़े बदलने लगी। दिवाकर ने उर्मिला के पास जाकर हंसते हुए कहा 'भोजन भी मिलेगा या नहीं।'

पलंग से उठती हुई उर्मिला बोली 'क्या सिनेमा में पेट नहीं भरा।'

दिवाकर मुस्कराते हुए बोला 'कहीं सिनेमा से पेट भरता है।'

उर्मिला खाना परोसने लगी। दिवाकर जब खाने बैठा तो उर्मिला ने पुकार कर कहा 'चल शीला। खाना खा ले।'

शीला आकर खाने बैठ गई। दिवाकर को उर्मिला के व्यवहार पर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने एक शब्द भी शीला से नहीं कहा।

खाते-खाते दिवाकर ने कहा 'पिक्चर बड़ी बढ़िया थी।'

उर्मिला चुप रही। शीला भी चुप खाना खा रही थी।

रात में दिवाकर ने कहा 'सुना तुम शीला से कुछ नाराज हो गई थीं।'

क्षण भर बाद कुछ गम्भीर होकर उर्मिला ने कहा 'मैं उस पर नाराज होने वाली कौन हूँ। मेरा उस पर अधिकार ही क्या है! चार दिन के लिये आई है चली जायगी।

उसने धीरे से एक साँस ली। दिवाकर ने हंसते हुए कहा 'तो क्या गुस्सा करने के लिये मैं ही फालतू हूँ।'

कुछ दृढ़ता के साथ उर्मिला ने कहा 'निश्चय ही आप पर मुझे अधिकार है, मैं जो चाहे स्वतन्त्रतापूर्वक कह सकती हूं और सुन सकती हूं। दूसरे पर मेरा अधिकार ही क्या है।'

हँसता हुआ दिवाकर बोला 'आज तो बड़े ज्ञान की बातें कर रही हो !'

उर्मिला बोली 'मैं मूर्ख—ज्ञान की बात करना क्या जानूँ !'

मुस्करा कर दिवाकर बोला 'जो तुम्हें मूर्ख कहे वह स्वयं मूर्ख है।'

उर्मिला बोली 'हँसी की बात नहीं है। मैं उसमें तो नहीं हाँ तुमसे अवश्य कह सकती हूँ कि शीला को यहाँ बुलाकर मैंने कुछ अच्छा नहीं किया।'

दिवाकर बोला 'बात क्या हुई कुछ बताओगी भी !

क्षणभर चुप रहकर उर्मिला बोली 'बात कुछ नहीं थी। हां, मुझे उसका इस प्रकार रोज रोज सिनेमा जाना पसन्द नहीं है। वह तो बच्चा है भली बुरी बात समझती नहीं है किन्तु तुम कैसे हो जी उसे साथ ले जा पहुँचते हो।'

दिवाकर उसके मुंह की ओर देखते हुए बोला 'तो इससे क्या हुआ !'

उर्मिला खीझकर बोली 'इससे हुआ मेरा सिर ! तुमको शर्म नहीं आती कि जवान-जहान लड़की को लेकर रोज पहुँच जाते हो। घर में बातचीत करने की बात और है; बाहर लोग देखेंगे तो क्या कहेंगे।'

दिवाकर बोला 'तो उन्हें कहने दो।'

उर्मिला स्फुट स्वर में बोली 'कहने कैसे दूं ! मुझे स्वयं यह बात पसन्द नहीं है। शीला को तो समझ नहीं है किन्तु तुम्हें तो समझना चाहिये।'

दिवाकर चुप होकर उर्मिला के मुंह की ओर देखने लगा। उर्मिला बोली 'आज जिस प्रकार उसने मेरे मुंह पर जवाब दे दिया वह मुझे पसन्द नहीं है। खैर, मैं उससे क्या कहूँ किन्तु यदि तुमने मेरी बात न मानी तो मैं घर छोड़कर चली जाऊंगी।

स्वामि-भक्ति मृत्यु की भांति दिवाकर बोला 'ऐसी बात है तो मैं न जाऊंगा। इसमें बिगड़ने की क्या बात है।'

उर्मिला को सन्तोष हुआ।

दूसरे दिन जब उर्मिला शीला से मिली तो बोली 'अब ज़रा मन लगाकर पढ़। अगर फेल हो गई तो बाबू जी क्या कहेंगे।

शीला बहिन का मुंह देखती रह गई।

(७)

शीला का मन धीरे धीरे छलाँग मार रहा था। वह चाहती थी कि वह दिन भर दिवाकर ही से बात करती रहे। पढ़ने बैठती तो मन न लगता; जी यही चाहता कि दिवाकर के साथ अकेले घूमने चली जाऊँ। उसे किसी प्रकार का संकोच और लज्जा न आती। जहां दिवाकर घर में आता झट मुस्करा कर उसके पास पहुँच जाती और बात करने लगती। इधर कई दिनों से वह दिवाकर से कहीं घूमने के लिये चलने की जिद कर रही थी किन्तु दिवाकर टाल जाता था उसके मन का तूफान उमड़ पड़ा था। उर्मिला सब कुछ देखती किन्तु चुप रह जाती। उसे अभी तक दिवाकर पर विश्वास था। अभी परीक्षा में दो मास बाकी थे—वह चाहती थी कि इस बार जब गर्मियों की छुट्टियों में बनारस चली जाय तो वह फिर किसी बहाने से उसे आने के लिये मना कर दे। वह बिना किसी अप्रिय घटना और बात के ही उसे दूर कर देना चाहती थी।

दिवाकर मस्त था। उसे न तो शीला के इस तूफान का ज्ञान था और न वह कुछ जान ही पाता था उर्मिला ने भी कभी उससे स्पष्ट रूप से कोई बात नहीं कही। उसे अपनी बहिन के विषय में कुछ कहते बड़ी लज्जा मालूम देती थी। इस उलझन में

पड़ जाने से वह दिवाकर से पहिले की अपेक्षा अधिक अच्छा व्यवहार करने लगी थी। शीला कुछ कुछ समझ कर भी उदासीन रहती। वह तो किसी प्रकार भी अवसर पाकर अपना सब कुछ दिवाकर को समर्पण करने के लिए तैयार थी किन्तु उसका भोलापन देखकर उसको साहस न होता था।

किन्तु इधर एकाएक सुधाकर के बीमार पड़ जाने से सबका ध्यान उधर ही चला गया। सुधाकर को टाइफाइड हो गया था। दिवाकर और उर्मिला दिन रात जी तोड़कर उसीमें जुटे हुए थे।

सुधाकर की दशा बिगड़ती ही गई। उर्मिला का शरीर इस चिन्ता में आधा भी न रह गया था। दिवाकर भी परेशान था।

अन्त में डाक्टर ने एक दिन कह दिया कि 'सुधाकर की दशा चिन्ताजनक है।'

रोती हुई उर्मिला बोली 'तब कोई और उपाय डाक्टर साहब।'

एक सांस लेकर डाक्टर वर्मा ने कहा 'ईश्वर के हाथ बात है। टाईफाइड का इलाज तो रोगी की सेवा है। वही किये जाइये।'

उर्मिला बोली 'मैंने तो सेवा में कोई त्रुटि कदाचित अब तक नहीं की। अब और जैसा आप बताइये।

'आप ठीक ही कर रही हैं' कहकर डाक्टर वर्मा चले गये।

अब तक किसी दिन रात में दिवाकर जागता और कभी उर्मिला। कभी-कभी शीला भी अपनी ड्यूटी लगा लेती थी। आज से उर्मिला सब कुछ छोड़कर सुधाकर के पास ही जम कर बैठ गई। नहाना, खाना पीना तथा सोना लगभग सभी कुछ छोड़ दिया। कभी-कभी तो वह चिन्ता में रो पड़ती दिवाकर ने समझाया 'ईश्वर पर विश्वास रक्खो उर्मिला। चिन्ता करने से कुछ न होगा।'

उर्मिला एक साँस लेकर बोली 'ईश्वर पर तो छोड़ दिया है। ईश्वर न सुनेगा तो और कौन सुनेगा।

और सचमुच ईश्वर ने उर्मिला की पुकार सुनी। सुधाकर धीरे-धीरे अच्छा होने लगा। लगभग १५ दिन के अन्दर ही सुधाकर खतरे से बाहर हो गया।

सुधाकर तो अच्छा हो गया किन्तु उर्मिला का शरीर टूट गया। एक दिन उसे भी ज्वर आ गया।

जब ७-८ दिन तक बुखार न उतरा तो डाक्टर ने बतलाया कि 'टाईफाइड हुआ मालूम पड़ता है।'

दिवाकर के तो होश से उड़ गये। उसने पूछा 'कबतक बुखार उतरेगा डाक्टर साहब।'

डाक्टर वर्मा रोग की भीषणता समझते थे किन्तु शांत्वना देने की नीयत से बोले 'चिन्ता की बात नहीं है। सब ठीक हो जायगा।'

किन्तु जैसा आश्वासन डाक्टर ने दिया था। उसके विपरीत ही होता दिवाकर को दिखाई दिया। उर्मिला ठीक होने की अपेक्षा अधिक गिरने लगी।

अन्त मे उर्मिला के होश भी जाते रहे। वह अनाप शनाप बकती। शीला जी तोड़कर बहिन की सेवा मे जुटी हुई थी। डाक्टर ने उसे दूर रहने का आदेश दिया था किन्तु शीला ने इसे माना नहीं। हाँ, सुधाकर को बनारस भेजा दिया गया।

उर्मिला की दशा देखकर दिवाकर विक्षिप्त सा हो रहा था। इधर कुछ ही दिनों में वह बिल्कुल बदल गया था। हास्यप्रिय, अल्हड़ तथा भोला दिवाकर थोड़े ही दिनों के अन्दर ही गम्भीर हो गया था। वह किसी से कुछ बोलता न था, चुपचाप उर्मिला की सेवा में दत्तचित्त रहता और बैठा-बैठा उर्मिला का मुँह देखा करता।

उस दिन शीला ने कहा 'आप आराम कर लीजिये जीजाजी मैं रात में जीजी के पास रहूँगी ।"

दिवाकर बोला 'तुम चिन्ता न करो शीला। मुझे रात में जागने में कोई कष्ट नहीं होता । और फिर अब कितना जगना रह गया है । उर्मिला क्या बच ....

और उसकी आँखों में आँसू आ गये।

शीला फूटकर रो पड़ी। बोली 'क्या मेरा कुछ भी कर्तव्य नहीं है जीजी के प्रति। वे मेरी माँ के ....

उसका गला भर आया ।

उस रात दिवाकर और शीला दोनों ही जागते रहे । रात भर उर्मिला को बड़ी बेचैनी रही ।

सबेरे डाक्टर ने आकर उसकी परीक्षा की और कहा हालत चिन्ताजनक है ।'

दिवाकर स्वयं इस बात को समझ रहा था। बोला क्या इनकी माँ को तार दे दूँ ।

डाक्टर ने धीरे कहा दे दीजिये ।'

शीला पास ही खड़ी थी। वह फूटकर रो पड़ी। डाक्टर ने कहा 'अभी कुछ कहा नहीं जा सकता। इतना घबड़ाने की आवश्यकता नहीं है।

दिन भर उर्मिला की दशा बहुत खराब रही। वह आँखें फाड़-फाड़कर सबकी ओर देखती थी और अनाप सनाप बकती थी। शाम को ६ बजते-बजते उसे थोड़ा सा आराम मालूम हुआ।

डाक्टर ने कहा 'यदि रात सकुशल बीत गई तो कुछ आशा हो सकती है।'

किन्तु यह सब व्यर्थ की बात है। उर्मिला रात भर बेचैन रही और प्रभात होते होते—

चल दी सदैव के लिये।
शीला ने रो-रो कर घर भर दिया।
दिवाकर रह गया स्तब्ध तथा मौन।

(८)

यह सत्य है कि समय घाव भरता है और इसका प्रत्यक्ष अनुभव दिवाकर को हुआ। कुछ दिन वह रहा मौन और स्तब्ध तथा उसके बाद रहा विक्षिप्त और पागल-सा अस्त व्यस्त। किसी से बात न करता, घर से निकल जाता तो घण्टों गोमती तट पर निराले में बैठा बैठा न जाने क्या-क्या सोचता रहता। कभी-कभी तो इस घटना को स्वप्न समझ कर उस पर विश्वास ही न करता।

शीला ने उसे सब से अधिक सांत्वना देने की चेष्टा की। दिवाकर बोला मैं सब कुछ समझता हूँ शीला किन्तु—

वह रो पड़ा। शीला उसके आँसू अपने आँचल से पोंछ कर कहती 'आप क्या करते हैं जीजा जी इतने विद्वान होकर।'

दिन बीत रहे थे।

उर्मिला की मृत्यु के अवसर पर जो सम्बन्धी तथा मित्र आये थे वे लगभग सभी लोग लौट गये थे। रह गई केवल उर्मिला की माँ और उसका भाई सुरेश।

एक दिन सास ने दिवाकर से कहा 'न हो तो कुछ दिनों के लिए बनारस ही चले चलो भैय्या। वहाँ तुम्हारा मन बहल जायगा।'

कुछ सोच कर दिवाकर ने कहा यदि जल्दी न हो तो आप ही अभी कुछ दिन यहाँ और ठहरिये। बाद में देखा जायगा।'

वे बोलीं 'मुझे यहाँ ठहरने में कोई आपत्ति नहीं है किन्तु मैं जानती हूँ कि अब कुछ दिन तक न तो तुम्हारा ही इस घर में मन लगेगा और न हम लोगों का ही। शीला की भी राय है कि कुछ दिनों के लिए सब लोग बनारस ही चलकर रहें।

कुछ सोच कर दिवाकर बोला 'मैं तो कदाचित अभी न जा सकूँगा। आप लोग जायें, कुछ दिन बाद मैं भी आजाऊँगा।

माँ शीला के मुँह की ओर देखने लगीं। शीला बोली 'जैसी जीजा जी की इच्छा। किन्तु यदि साथ चलते तो अधिक अच्छा रहता।

दिवाकर कहना चाहता था कि शीला भी यहां रह जाय किन्तु वह चुप रह गया। उसे ऐसा कहने का साहस भी न हुआ।

मां बोलीं 'अभी तक तो तुम्हारा शीला की वजह से जी लगा रहता था भैय्या। उसके चले जाने से तुम्हें बड़ा कष्ट हो जायगा।'

दिवाकर का जी भर सा रहा था। वह उठ कर बाहर चला गया।

उस दिन रात के १० बजे दिवाकर के पास पहुँच कर शीला बोली 'क्यों नींद आ रही है जीजा जी ?'

दिवाकर बोला 'सोने की चेष्टा में तो हूँ। आओ बैठो।'

शीला पास ही पड़ी हुई कुर्सी पर बैठ गई। दिवाकर चुपचाप लेटा रहा।

थोड़ी देर तक चुप रहने के बाद शीला ने कहा 'क्या बनारस न चलेंगे आप ? मेरा तो वहाँ आपको यहाँ छोड़ कर मन न लगेगा।'

दिवाकर कुछ देर बाद बोला 'क्या करूं शीला, अब तो जिस प्रकार होगा दिन बिताये ही जायंगे। कौन जानता था कि इतना हरा भरा घर इतनी जल्दी उजड़ जायगा।'

शीला चुप रही। दिवाकर बोला 'और फिर अब उपाय ही क्या है ?

शीला बोली 'यदि आप कहें तो मैं रुक जाऊं।'

एक लम्बी सी साँस लेकर दिवाकर बोला 'मैं क्या कहूँ तुमसे शीला। तुम्हें यहाँ अब रोकना अब कुछ अनुचित ही सा मालूम पड़ रहा है। कदाचित तुम्हारी माँ भी इस बात को पसन्द न करेंगी।

शीला बोली 'माँ की तो कोई बात नहीं है। मैं उन्हें समझा दूंगी।'

दिवाकर बोला 'किन्तु यह बात ठीक होगी क्या ?

शीला बोली 'और अब तक कैसे ठीक थी !'

रूखी हँसी हँस कर दिवाकर बोला 'अब तक सब कुछ ठीक था। अब तो परिस्थिति ही बदल गई है मेरे लिए और मैं क्या कहूँ।'

शीला जो कुछ कहना चाहती थी वह कह नहीं पा रही थी। वह चुप होगई।

दिवाकर बोला 'इस सहानुभूति और संवेदना के लिए मैं तुम्हें धन्यवाद देता हूँ शीला। इसके अतिरिक्त मैं तुम्हें और दे ही क्या सकता हूँ !'

सहसा शीला के मुँह से निकला 'देने को तो आप सभी कुछ दे सकते हैं जीजा जी किन्तु मेरा मुँह माँगने के लिए नहीं खुलता।

दिवाकर गौर से शीला के मुँह की ओर देखने लगा।

शीला बोली 'न तो मैं आपको ही इस प्रकार कष्ट में घुलने के लिए छोड़ कर जा सकती हूँ और न सुधाकर ही को; और आपसे क्या कहूँ !

दिवाकर अब कुछ-कुछ समझ चला था। बोला 'इस बात

का यह उपयुक्त समय नहीं शीला । अभी तो मेरा मस्तिष्क कुछ निर्णयात्मक बात सोचने की क्षमता नहीं रखता ।

वह सिर झुका कर मौन हो गया । शीला बोली 'मैं अपने लिए—अपने स्वार्थ के लिए—कुछ नहीं चाहती जीजा जी, किन्तु सुधाकर तो मुझे छोड़ कर रह ही नहीं सकता ।'

दिवाकर यह बात जानता था कि सुधाकर शीला से हिला-मिला है और वह साधारण रूप से उसे छोड़ने वाला नहीं ।

वह बोला 'जो कुछ भी हो हमको इस सम्बन्ध में बहुत सोच समझ कर बात करना चाहिए शीला ।

शीला बोली 'मैं इस सम्बन्ध में बहुत कुछ सोच चुकी हूँ जीजा जी । मैंने इस सम्बन्ध में अभी तक आपसे कुछ नहीं कहा । सोचा कि आप मेरे सम्बन्ध मे न जाने क्या सोचने लगेंगे । यह तो भगवान ने अपने ऊपर विपत्ति डाल ही दी नहीं तो (आँसू बहाते हुए) इन सब बातों के सोचने की आवश्यकता ही क्या थी ।

दिवाकर ने देखा कि शीला दुःखी होरही है, वह बोला 'जो होना था सो हो गया शीला अब जितना ही उस बात को सोचो उतना ही दुःख होता है । कभी क्या ऐसी कल्पना भी की जा सकती थी ।'

शीला आँसू पोंछती हुई बोली ' आप कदाचित मुझे महान् नीच प्रकृति की कहेंगे अपने मन में किन्तु आज समय ही ऐसा आ पड़ा है जो········

और वह फिर रो पड़ी । दिवाकर बोला 'इस प्रकार रोकर तो तुम मेरे दुःख को और भी उभाड़ रही हो शीला । अच्छा जाओ, सो रहो जाकर । इस विषय में हम तुम फिर विचार करेंगे ।'

शीला उठ कर जाने लगी । दिवाकर ने उसे फिर पुकारा 'शीला'

शीला लौट कर खड़ी हो गई। दिवाकर बोला 'किन्तु तुम्हारी माता जी ....

बीच ही में शीला बोल पड़ी 'इस सम्बन्ध में आप चिन्ता न करें। मैं बात कर लूंगी।

दिवाकर चुप रहा। शीला चली गई।

दिवाकर को फिर नींद न आई। वह शीला के इस नये प्रस्ताव के लिए तैयार न था। कभी उसने सोचा अवश्य था कि यदि शीला के साथ उसका विवाह हुआ होता तो कितना सुखद होता किन्तु उर्मिला की मृत्यु के बाद तो उसने यह सब तो एक क्षण के लिए भी न सोचा। आज स्वयं शीला के मुँह से इस प्रस्ताव का संकेत पाकर वह गहरे विचार में पड़ गया।

उसने सोचा 'क्या यह सम्भव और उचित होगा? और अनुचित भी नहीं है। यदि विवाह करने की बात सोचूं तो...फिर शीला ही का पहिला अधिकार है। इससे उर्मिला की आत्मा को सुख पहुँचेगा और सुधाकर भी उर्मिला को भूल सकेगा। किन्तु.......किन्तु.....किन्तु लोग क्या कहेंगे? यह तो कुछ अनुचित बात है नहीं टीका-टिप्पणी के लिए। फिर-फिर क्या शीला की माँ भी यही चाहेंगी? मैं तो इतना सरल इस प्रस्ताव को समझता नहीं हूँ। ....यदि विवाह ही करना है तो फिर .... किन्तु शीला क्या बुरी है?

किन्तु दिवाकर अन्तिम निर्णय न कर सका। उसे बार बार उर्मिला की वह बात याद आती थी जिसमें उसने कहा था 'मैं बैठी न रहूंगी--दूसरी को लाकर अपनी साध पूरी कर लेना।' यह बात याद आते ही उसके चोट सी लगती थी और फिर विवाह न करने की कल्पना करने लगता था। किन्तु आज शीला के इस प्रस्ताव ने परस्थिति ही बदल दी। 'यदि शीला से विवाह करलूं तब तो उर्मिला की बात झूठी पड़ जायगी

न !' किन्तु फिर भी क्या उर्मिला ने कभी जीवन में यह सोचा होगा कि मैं शीला से.........

ऐसे अवसरों पर हमारी छिपी हुई भावुकता नर्तन करने लगती है। मझधार में पड़ी हुई नौका कभी भावुकता के थपेड़ों में पड़ कर डूब जाना चाहती है और कभी किसी सुन्दर तट पर पहुँचने की सुखद कल्पना करने लगती है। भावुकता और महत्वाकांक्षा परस्पर प्रतिद्वन्द्विता में पड़ जाती है। भावुकता में कष्ट और महत्वाकांक्षा में प्रत्यक्ष सुख दिखाई पड़ने लगता है। यहीं पर मानव की दृढ़ता की कसौटी है। अपना मत है कि ८० प्रतिशित सुखद भावना की कल्पना ही की विजय होती है। उस महत्वाकाँक्षा की ओर बढ़ते हुए पग को मानव नाना-प्रकार के तर्कों से न्याय संगत करार देने की चेष्टा करता है।

यही दशा दिवाकर की थी। शीला के साथ युक्त होने की कल्पना इसे भविष्य की ओर देखने के लिए विवश करने लगी इस विचार-धारा में गोते खाते खाते प्रभात होगया।

जब शीला चाय लेकर आई तो आज प्रथम वार दिवाकर ने उसे नये रूप से देखने चेष्टा की। 'भावी पत्नी, के रूप में देख कर दिवाकर न जाने क्या-क्या सोच गया।

शीला मुस्किरा कर बोली, 'रात भर नींद आई या जागा ही किये जीजा जी !

दिवाकर की चोरी पकड़ सी गई। हँस कर बोली 'तुम्हारी ही बात पर विचार करते-करते सबेरा हो गया शीला।'

शीला प्रत्यक्ष रूप से एकदम गंभीर हो गई।

दोनों चाय पीने लगे।

चाय का प्याला मेज पर रखते हुए दिवाकर बोला 'माँ से बात चीत हुई कुछ इस विषय में !

क्षण भर कुछ सोच कर शीला बोली 'बात तो नहीं हुई,

किन्तु उन्हें इसमें आपत्ति न होगी।

दिवाकर ने कहा 'तुम्हें बात कर लेना चाहिये था। बिना उनसे बात किये…………

शीला जरा मुँह बनाकर बोली 'मुझे थोड़ी लज्जा सी लगती है।'

दिवाकर किंचित मुस्करा कर बोला 'तो पूछना तो तुम्हीं को पड़ेगा। मैं तो ऐसा साहस कर नहीं सकता।

शीला बोली 'किन्तु…………

और वह चुप हो गई।

दिवाकर बोला 'कहते-कहते रुक क्यों गई'।

शीला बोली माँ ने…………

और वह चुप हो गई।

दिवाकर कुछ उत्सुकता से बोला 'कहती क्यों नहीं हो शीला।

शीला क्षण भर चुप रह कर बोली 'किन्तु माँ राजी हो जायगी।'

दिवाकर कुछ झल्ला कर बोला क्या खूब बात करती हो शीला। अभी इस विषय मे तुम्हारी और उनकी कुछ बात तो हुई नहीं और तुम कहती हो कि वे राजी हो जायेंगी। खुलासा क्यों नहीं कहतीं ?'

शीला जरा गम्भीर होकर बोली 'जीजी ने उनसे कहा था।

दिवाकर आश्चर्य के साथ बोला 'जीजी ने कहा था ? क्या उर्मिला ने ?'

सिर हिलाते हुए शीला ने कहा 'हाँ, मरने के पहिले उन्होंने माँ से यह कहा था।'

दिवाकर कुछ उद्विग्न सा होकर बोला 'क्या कहा था ! कहती क्यों नहीं हो साफ साफ।

शीला उसी प्रकार गम्भीर होकर बोली ' यही बात जो मैंने

आप से कह दी। उन्होंने मरने के दो दिन पूर्व माँ से कहा था कि..........

वह चुपचाप हो गई। दिवाकर बोला 'हाँ हाँ, क्या कहा था ?'

शीला हँसी के साथ झुंझला कर बोली 'जाओ, मैं कुछ नहीं कहती।

दिवाकर चुप होगया। कुछ देर बाद दिवाकर बोला 'क्या यह सच है शीला ?

शीला ने कहा 'क्या आपको विश्वास नहीं होता ? मैं भी वहाँ मौजूद थी, किन्तु अभी तक मैंने आपसे इसलिए नहीं कहा कि...........

हँसकर दिवाकर ने कहा 'कि कदाचित् मैं तुम्हारा विश्वास न करूं ?

शीला दृढ़ता से बोली 'जी हाँ।

दिवाकर चुप हो गया। वह इस बात पर विचार कर रहा था।

शीला बोली 'मैं स्नान करने जा रही हूं। कुछ और काम तो नहीं है ? सुधाकर को भी नहलाना है।'

दिवाकर कुछ देर के लिए अलग रहना चाहता था। वह बोला 'अच्छा। दो पान भेज देना।'

थोड़ी देर में शीला पान लेकर आई और उन्हें दिवाकर के मुंह में खोंसते हुए बोली 'बस अब जा रही हूँ।

वह चली गई।

(९)

असबाब तांगे पर लदवा कर जब शीला सुधाकर को लेकर उसमें बैठ गई तो दिवाकर बोला 'मैं' शीघ्र ही अपना काम समाप्त करके बनारस आऊंगा। सुधाकर को ठीक से रखना।

शीला नौकर से बोली 'माँ से कहो कि जल्दी आयें नहीं तो गाड़ी छूट जायगी।'

नौकर चला गया। शीला बोली 'जा तो रही हूँ किन्तु बिना आपके मेरा मन क्षण भर के लिए भी वहाँ न लगेगा।

दिवाकर बोला 'जल्दी ही आऊंगा। बाबूजी से भी बात करके मुझे पत्र लिखवा देना। ढील मत करना।

शीला हँसकर बोली 'अब इतनी जल्दी पड़ गई! सब काम नियम ही से होगा न।

दिवाकर बोला मजाक में मत उड़ाओ मेरी बात। जाते ही बाबूजी से बात कर लेना।

शीला मुस्करा कर बोली 'बहुत अच्छा साहब। और आज्ञा!

दिवाकर ने कहा 'आज्ञा की बात नहीं है शीला, तुम भी ठीक तौर से रहना। इधर तुम्हारा स्वास्थ्य खराब हो गया है उसे संभालने की चेष्टा करना। अब तो मुझे तुम्हारी ज्यादा फिकर हो गई है।'

हंसकर शीला बोली 'अभी से? अभी तो कुछ हुआ भी नहीं है।

मुस्करा कर दिवाकर ने कहा 'अब हुआ ही समझो। कसैर क्या रह गई है?'

माँ आ गईं और ताँगा चल दिया।

दिवाकर अन्दर लौट आया। आज वह प्रसन्न था शीला को उसने विवाह का बचन दे दिया था। वह नये सिरे से अपना जीवन प्रारभ करेगा।

दूसरे दिन दोपहर को ज्योंही वह भोजन करके लेटा था कि नौकर ने आकर कहा 'रामनारायण बाबू आये हैं।

दिवाकर लेटे ही लेटे बोला 'बुलालो उन्हें यहीं।

रामनारायण ने आकर कहा 'भोजन करने के बाद सोचा

कि चलो तुम्हारे ही पास जी बहलायें।

'हाँ-हाँ, आओ बैठो'—कह कर दिवाकर उठ कर बैठ गया।'

रामनारायण भी चारपाई पर जाकर अच्छी तरह बैठ गये और बोले 'अब तुम्हारा मन भी तो अकेले-अकेले न लगता होगा।'

दिवाकर बोला 'शीला आदि भी कल चलीं गईं। अब तो अकेला ही हूँ।'

रामनारायण बोले 'सुधाकर भी गया क्या ?

दिवाकर ने कहा 'हाँ।'

कुछ देर तक इधर-उधर की बात करने के बाद रामनारायण ने कहा 'अब क्या इरादा है ?'

'कैसा इरादा ?' दिवाकर ने पूछा।

रामनारायण ने कहा 'अरे यही विवाह करने का इरादा और क्या ? वह तो करना ही पड़ेगा भाई। अभी कौन-सी उमर चली गई है ?'

नीचा सिर करके दिवाकर ने कहा 'देखा जायगा। इस विषय में सोचूंगा फिर कभी।'

रामनारायण बोले 'इसमें सोचने की क्या बात है दिवाकर ? जब करना ही है तो इसमें देर की क्या जरूरत है ?

दिवाकर चुप रहा। रामनारायण ने कहा 'एक-से एक बढ़िया लड़कियाँ मिलेंगी तुम्हारे लिए। किसी पढ़ी लिखी तथा देखने में सुन्दर लड़की से सम्बन्ध ठीक कर लो।'

दिवाकर ने कहा 'जब सम्बन्ध करने वाले आयेंगे तब देखा जायगा। और हाँ (नौकर को पुकार कर) जरा पान तो ला अच्छे से लगवा कर।

दिवाकर इस विषय को बदलना चाहता था किन्तु रामनारायण फिर बोले 'इसी सहालग में विवाह हो जाना चाहिये।

तुम्हारे जैसे व्यक्ति क्या कभी दो दिन भी बिना साथी-संगी के रह सकते हैं।'

दिवाकर बोल उठा हाँ, बात तो ठीक कहते हो।

रामनारायण बोले 'तो फिर बोलो कैसी लड़की चाहते हो।'

दिवाकर मुशीबत मे पड़ गया। बोला 'फिर कभी बात करूंगा इस विषय मे।

रामनारायण चुप हो गये। दिवाकर बोला 'अभी दस पाँच दिन के लिए बनारस जाने वाला हूँ। लौट कर फिर कुछ सोचूँगा।

क्षण भर चुप रह कर रामनारायण बोले 'तो चलो आज शाम को सिनेमा ही देख आयें। जरा तुम्हारा भी जी बहल जायगा।

अच्छी बात है, दिवाकर बोला।

रामनारायण बोले 'तो फिर मेरी ही तरफ आ जाना। चाय पीकर सिनेमा चलेगे।

अच्छी बात है, कह कर दिवाकर चुप हो गया।

रामनारायण थोड़ी देर बाद चले गये। दिवाकर लेट कर आराम करने लगा।

\+ + +

शाम को दिवाकर रामनारायण के घर पहुँचा। रामनारायण बोले 'अभी तो देर है। आराम से चाय पीकर चलेंगे।

हँस कर दिवाकर ने कहा 'चाय का तो निमन्त्रण ही दे आये थे। अब क्या कोरा टालना चाहते हो ?

मुस्किरा कर रामनारायण बोले 'ऐसी बात नहीं है भाई। मैंने पहिले ही रमा से कह दिया है कि तुम शाम के वक्त यहाँ चाय पियोगे।'

रमा का नाम सुनते ही दिवाकर को एकाएक याद आया

कि अभी तक उसका विवाह नहीं हुआ। तो क्या रामनारायण ने......... ....

और वह विचार सागर में गोते खाने लगा। रामनारायण बोले 'तो फिर चुप क्यों हो गये ?

दिवाकर हँसते हुए बोला 'कुछ बात नहीं है। उस दिन की............

इतने में रमा आगई चाय की ट्रे लेकर। दिवाकर ने देखा रमा आज सजी सजायी बिल्कुल परी सी बनी हुई है। उसे देख कर वह शीला को भूल सा गया।

दोनों चाय पीने लगे। रामनारायण ने कहा 'और कुछ खाने को भी तो लाओ रमा।

'जी, अभी ला रही हूँ, कहती हुई रमा अन्दर चली गई।

दिवाकर की आँख के आगे बिजली सी चमक गई और वास्तव में रमा हजारों सुन्दरियों में एक थी।

रामनारायण ने चाय पीते हुए कहा 'अभी तक इसके लिए कोई लड़का नहीं मिला। बड़ी परेशानी है।'

दिवाकर मंत्र-मुग्ध की नाईं बोला 'ऐसी लड़की के लिए लड़का नहीं मिलता ? तुमने ढूंढ़ा ही न होगा।

रामनारायण ने कहा 'क्या बताऊँ कहाँ-कहाँ सिर मार चुका हूं। कोई हाथ तो धरने नहीं देता। तुम्हीं कहीं बताओ न ?

थोड़ी देर में रमा एक दूसरी ट्रे में मिठाई और नमकीन की प्लेटें लेकर आ गई। दोनों खाने लगे।

जब रमा भीतर जाने लगी तो रामनारायण ने कहा 'सिनेमा चलेगी रमा।'

रमा रुक कर बोली 'अच्छी बात है।'

तो फिर तैयार होकर आजा' रामनारायण ने कहा।

रमा चली गई। दिवाकर को यह सब बड़ा विचित्र सा

लगा। वह रामनारायण को मुद्दत से जानता है कि वे इन सब बातों के विरोधी हैं, फिर आज !

दिवाकर के दिमाग में आया कि कहीं..........

रामनारायण बोल उठे 'अब भाई जल्दी करना चाहिये।'

दिवाकर प्याला मेज पर रखता हुआ बोला 'चलो। अपने राम तो तैयार ही हैं।'

रामनारायण ने पुकारा 'रमा, चलो जल्दी।

थोड़ी देर में तीनों यूनीवर्सल टाकीज' को ओर चले। यद्यपि दिवाकर रामनारायण से बात करता चला जा रहा था फिर भी बार-बार रमा पर उसकी दृष्टि बरबस जा पड़ती थी।

रास्ते में रामनारायण ने फिर वही विषय छेड़ दिया, बोले 'रमा के लिए कहीं ठीक ठाक करो जल्दी दिवाकर। यह भार तुम्हारे ही ऊपर है।

दिवाकर बोला 'हाँ हाँ चेष्टा करूंगा !

जब सिनेमा देख कर लौटे तो रास्ते में फिर रामनारायण बोले 'बनारस से कब तक लौटोगे ?

'यही ६ ७ दिन में।' दिवाकर बोल दिया।

रामनारायण के घर के पास पहुँच कर दिवाकर ने कहा 'अब भाई घर चलूँगा। बड़ा आनन्द मिला आज तुम्हारे साथ।

दिवाकर का हाथ पकड़ कर खींचते हुए रामनारायण ने कहा 'अरे अभी क्या जाकर करोगे घर मे। घर मे तो कोई है नहीं। न हो, आज यहीं सोजाना।

हँस कर दिवाकर ने कहा 'हमारे घर में तो कोई नहीं है किन्तु तुम्हारे घर में तो ऐसा नहीं है। हम रहेंगे तो भाभी जी को तो तकलीफ ही होगी।

अपने घर की ओर बढ़ते हुए रामनारायण बोले 'सो तो ठीक है मगर आओ तो ? थोड़ी देर में चले जाना।

दिवाकर अन्दर आगया। कमरे मे बैठते हुए रामनारायण बोले 'पिक्चर मनोरंजक थी।'

दिवाकर ने कहा 'हाँ, काफी अच्छी थी, किन्तु कला की दृष्टि से कुछ नहीं थी।

'तो यहाँ कला के पहिचानने वाले ही कितने हैं ? कला पूर्ण चित्र तो सप्ताह भर से अधिक यहाँ चल भी नहीं सकता।' दिवाकर ने कहा।

'हाँ, बात तो ठीक कह रहे हो।'

थोड़ी ही देर में रमा भोजन की थाली लेकर आगई। दिवाकर के सामने उसने थाली रख दी। वह बोला 'न भाई मैं कुछ न खाऊँगा।'

रामनारायण बोले 'अब नखरे मत करो। चुपचाप खालो। दूसरी थाली मेरे लिए लाओ रमा।

रमा चली गई। कुछ गम्भीर होकर दिवाकर ने कहा 'यह तुम्हारी बड़ी ज्यादती है।'

रामनारायण बोले 'तुम यह तकल्लुफ कब से करने लगे दिवाकर ? शुरू करो नहीं तो सब ठण्डा हो जायगा।

रमा दूसरी थाली लेकर आगई। दोनों खाने लगे।

खाते खाते दिवाकर ने कहा 'खाना तो भाभी जी बहुत बढ़िया बनाती हैं।

रामनारायण बोले 'पीठ पीछे तारीफ करने से क्या फायदा। तारीफ तो मुँह पर करना चाहिये।'

दिवाकर हँस कर बोला 'यह मेरा दुर्भाग्य है कि कभी आज तक उनसे अपना परिचय क्या कभी दर्शन भी नहीं हुए।

रामनारायण ने कहा 'तो परिचय हो जाने में कठिनाई ही क्या है। अरे रमा, जरा अपनी भाभी को तो बुला लाना।'

रमा अन्दर चली गई। दिवाकर ने कहा 'यह तो माँग कर

किसी चीज का लेना हुआ। बेकार में भाभी जी नाराज हो जायेंगी।

इतने ही में रमा के साथ रामनारायण जी की पत्नी कला ने आकर दिवाकर से नमस्ते की।

'नमस्ते भाभी जी, आपको बेकार कष्ट हुआ 'दिवाकर हाथ जोड़ते हुए बोला !

'कष्ट की क्या बात है, कला ने धीरेसे कहा।

दिवाकर की समझ में न आया कि वह क्या बात करे। अंत में बोला 'इतना सुन्दर भोजन खिलाने के उपलक्ष्य में धन्यवाद।

जरा सकुचाती हुई कला बोली 'इस में धन्यवाद की क्या बात है। अच्छा भोजन तो रमा बनाती है। एक दिन खाकर देखिए।'

दिवाकर बोला 'जब कहिये तब आ जाऊँ। इससे अपने को क्या इंकार।

भोजन समाप्त हो जाने के बाद जब रामनारायण और दिवाकर अकेले रह गये तो दिवाकर बोला 'बहुत पेट भर गया। अब तो चलना फिरना भी कठिन है।

रामनारायण बोले 'तो अब जाना कहाँ है ? बगल के कमरे में हमारा और तुम्हारा बिस्तरा लगा है। चलो वहीं आराम करें।

दिवाकर बोला 'तो क्या घर को इस्तीफा दे दें ?

हँसते हुए रामनारायण ने कहा 'मैंने अपना नौकर भेज कर तुम्हारे नौकर से कहलवा दिया है कि आज बाबू जी यहीं रहेंगे।

दिवाकर बोल उठा 'यह खूब रही ! मुझसे पूछा भी नहीं।

'पूछने की क्या जरूरत थी ?' कह कर रामनारायण उठ खड़े हुए।

दिवाकर भी खड़ा हो गया। बगल ही कमरे में साफ सुथरे दो पलँग बिछे हुए थे। दोनों जाकर लेट रहे।

थोड़ी देर बाद रामनारायण बोले 'रमा तुमको पसन्द है दिवाकर !

दिवाकर कुछ नींद में आ चला था। बोला 'क्या कहना है। लड़की सर्व गुण-सम्पन्न है।'

अवसर पाकर रामनारायण ने कहा 'यदि तुम इस प्रस्ताव को स्वीकार कर सको तो फिर मुझे क्यों भटकना पड़े।

दिवाकर की नींद एकदम गायब हो गई। वह चौंक कर बोला क्या कहा तुमने ?

रामनारायण धीरे से बोले 'तुम्हारी और रमा की जोड़ी बहुत ठीक रहेगी। मुझे आशा है कि तुम इससे इंकार न करोगे।

दिवाकर एकदम चुप। थोड़ी देर तक उत्तर की प्रतीक्षा करने के बाद रामनारायण ने कहा 'क्या सो गये।'

दिवाकर यद्यपि जाग रहा था किन्तु उसने सो जाना ही ठीक समझा। वह सोचने का समय चाहता था अतएव नकली गुर्राटे भरने लगा।

रामनारायण भी सो गये।

(१०)

दूसरे दिन सवेरे जब दिवाकर घर जाने लगा तो रामनारायण ने कहा 'तो फिर मैं निश्चिन्त रहा।

दिवाकर कुछ सोच कर बोला 'हाँ, ठीक है, किन्तु निश्चिन्त

रूप से मैं बनारस से लौट कर बतलाऊंगा।'

रामनारायण ने कहा 'मगर इस बात को तय ही समझना दिवाकर। मेरा भी तुम पर कुछ अधिकार है। यों भी रमा जैसी लड़की तुम्हें खोजने से भी न मिलेगी।

सिर हिलाता हुआ दिवाकर बोला 'आप ठीक कह रहे हैं और मुझे भी कोई आपत्ति नहीं है किन्तु बनारस वालों से भी सलाह ले लेना आवश्यक है।'

रामनारायण बोला 'इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं है, किन्तु दिन थोड़े ही रह गये हैं। कुछ मुझे भी तैयारी करनी पड़ेगी।

दिवाकर चुप रहा। रामनारायण ने फिर कहा 'मैं तो अब तैयारी में लगूँगा क्योंकि तुम्हारी ओर से मुझे स्वीकृति मिल ही गई है।

इतने में आ गई कला। मुस्किरा कर दिवाकर ने कहा 'अब चल रहा हूँ भाभी।'

कला बोली 'इतनी जल्दी क्या है ? खा पीकर जाना।

दिवाकर बोला 'अब तो चलूँगा। यह तो अपना ही घर है फिर आजाऊंगा।

कला ने पति की ओर देखा। रामनारायण बोले 'सब ठीक है कला। स्वीकृति न देंगे तो जायेंगे कहाँ दिवाकर बाबू।

दिवाकर हंस कर चल दिया।

उसके जाने के बाद रामनारायण ने कहा 'जायेंगे कहाँ बच कर बेटा। फिर दिवाकर अपने बचन का आदर्मी है !'

कला बोली 'और कोई बात नहीं है, हाँ कहीं बनारस वाले इन्हें उलटा सीधा न समझा दें।

रामनारायण बोला 'बनारस में ऐसा कौन है जो यह सब करेगा ?

कला बोली 'यह खूब कही वहाँ तो इनकी साली ही व्याहने

के लिए बैठी ही है ।'

रामनारायण के मुँह से निकला 'कौन, शीला ! अरे, उसका और रमा का मुकाबिला क्या ।

और घर पहुँच कर दिवाकर भी यही सोचने लगा 'शीला और रमा का मुकाबिला ही क्या हो सकता है ? किन्तु मैंने बड़ी जल्दी की । अब शीला से क्या कहा जायगा ! सदा के लिए मनोमालिन्य हो जायगा । किन्तु·······हुआ करे·······मुझे स्वयं अपना हित देखना चाहिये । यदि बनारस न जाऊं तो·····और

डाकिये ने आकर दिवाकर को चिट्ठी दी । पत्र शीला का था । उसने लिखा था:—

प्रियमेरे······

आप कब आरहे है ? परसों रात भर मैं आपको स्वप्न में देखती रही । न जाने क्यों जी घबड़ाता है । आप वहाँ क्या कर रहे हैं ? चले क्यों नहीं आते । आपके बिना अब यहाँ एक क्षण भी बनारस में जी नहीं लगता ।

माताजी ने बाबूजी से बात कर ली है । पिताजी को तो आप जानते ही हैं कि आपको कितना पसन्द करते हैं ? और आप को कौन पसन्द न करेगा··········

सुधाकर मजे में है । कहता है मैं लखनऊ तभी जाऊंगा जब तुम साथ चलोगी ।

न जाने आपके दिन वहाँ कैसे कटते होंगे ? मैं तो यही सोच-सोच कर परेशान हो जाती हूँ । अपने स्वास्थ का खूब खयाल रखना, कहीं सोच फिकर में दुबले न हो जाना ?

पत्रोत्तर तुरन्त दीजिएगा ।

आपकी सदा से—
शीला

दिवाकर पत्र समाप्त करके उसे हाथ में लिए बैठा रहा ।

उसने सोचा कि रमा के लिए उसे साफ इंकार कर देना चाहिये था, किन्तु क्या रमा·······

वह फिर रमा और शीला की तुलना करने लगा। रमा की बात याद आते ही शीला का चित्र बिलकुल धुंधला होने लगता था। और वास्तव में बात भी यही थी। रमा और शीला की तुलना में प्रत्येक व्यक्ति रमा ही चुनता।

दिवाकर चक्कर में पड़ गया। शीला और रमा! शीला और रमा!! उसका दिमाग घूम गया।

जितना ही वह इस समस्या में घुमता था उतना ही परेशान हो जाता यही सोचते सोचते सारा दिन समाप्त होगया किन्तु वह शीला को उत्तर न लिख सका। अंत में वह दूसरे दिन शीला को पत्र लिखने बैठा। उसने लिखा:—

प्रिय शीला:—

पत्र मिला। जिन उलझनों में पड़ा हुआ था वे अभी तक शेष नहीं हुई। शीघ्र ही बनारस आने की चेष्टा कर रहा हूँ। वहीं आकर बात करूंगा।

इधर एकाध मित्रों के कारण थोड़ा जी लग गया है। तुम चिन्ता न करना। मैं जब आऊंगा तब सोच समझ कर बाबूजी से बात करूंगा।

सुधाकर को ठीक से रखना। जब आऊंगा तब उसे साथ लेता आऊंगा।

कदाचित् तीन चार दिन में काशी आ सकूं।

सबको यथायोग्य—

तुम्हारा
दिवाकर

चिट्ठी भेजकर उसे कुछ शान्ति मिली।

इधर तीन चार दिन के अन्दर अच्छी तरह सोच समझ कर

उसने निश्चय किया कि वह रमा ही से विवाह करेगा। इस निर्णय को वह बनारस तक कैसे पहुँचाये इस योजना को सोचने लगा। अन्त में उसने सोचा कि बनारस ही जाकर वह मामला सुलझ सकता है।

बनारस जाने के एक दिन पहिले वह रामनारायण के घर पहुँचा। थोड़ी देर तक बातचीत करने के बाद रामनारायण ने कहा 'बनारस कब जा रहे हो ?

क्षण भर सोचकर दिवाकर ने कहा 'कल जाने का इरादा है।'

रामनारायण बोले 'हाँ' जल्दी से हो आओ। इधर मैंने तैयारी तो शुरु कर दी है, किन्तु तुम्हारा भी यहाँ रहना आवश्यक है।'

दिवाकर चुप रहा। रामनारायण ने कहा 'तुम्हारे ही कहने से अब मैं निश्चंत हो गया हूँ। इसमें किसी प्रकार की बाधा न पड़ना चाहिये।

दिवाकर बोला 'बाधा की कौनसी बात है। मैं तो कह ही चुका हूँ।

रामनारायण प्रसन्न होकर बोले 'कहीं बनारस वाले अडंगा न लगायें ?

'नहीं कह कर दिवाकर चल दिया।

रामनारायण ने कला से जाकर कहा 'सब ठीक ही होगया है। अभी दिवाकर आया था, वह बात का पक्का आदमी है। तुम अब आनंद पूर्वक तैयारी प्रारम्भ करो।

कला ने हँस कर कहा 'हमारी रमा रानी कुछ मामूली थोड़े ही हैं। इन्हें एक बार देख कर कौन छोड़ सकता है।

रामनारायण बाहर चले गये।

(११)

इधर रमा के विवाह की तैय्यारियाँ प्रारंभ हुई और उधर दिवाकर बनारस पहुँच गया। उसे देख कर शीला की जान में जान आई मुंह बना कर बोली 'चलो आने की छुट्टी तो मिली।

खिसियाये हुए से दिवाकर ने हँस कर कहा 'क्या करू छुट्टी ही नहीं मिलती थी।

शीला बोली 'इधर बाबूजी बड़े परेशान थे। यों तो लगभग सभी तैय्यारियाँ हो गई हैं फिर भी बाबूजी आपसे बात करने के बड़े इच्छुक थे।'

दिवाकर का जी बैठा जा रहा था। वह समझ न पाता था कि वह क्या कहे ? वह जानता था कि ज़रा सी ही निराशात्मक बात करते ही सारे घर में शोक सा व्याप्त हो जायगा। वह बोला 'आज बाबूजी से बात करूंगा।'

शीला धीरे से बोली 'बात क्या करना है ! बाबूजी चाहते हैं कि विवाह अगले जाड़े में हो आप इस पर राजी न होइयेगा इसी गर्मी में ठीक रहेगा।'

दिवाकर शीला के मुंह की ओर देखने लगा। उसने सोचा कि जब असली बात मालूम होगी तो इसे कितना दुःख होगा ? उसका जी घबड़ाने लगा !

शीला बोली 'आप बोलते क्यों नहीं हैं ? जाड़े के तो अभी छः महीने पड़े हैं। क्या वही ठीक रहेगा ?

दिवाकर के मुँह से निकला 'मैं बात कर लूँगा।'

शाम को जब बाबू जी से दिवाकर की भेंट हुई तो वे बोले 'देखो दिवाकर, शीला और तुम्हारी इच्छा की वजह से मैंने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया है। जिसमें तुम लोगों को

सुख मिले मैं वही करना चाहता हूँ। अब रहा प्रबन्ध और तिथि निश्चित करने की बात सो मैंने यद्यपि जाड़े की बात सोची है फिर भी सब कुछ तुम्हारी इच्छा पर निर्भर है।

दिवाकर बीच में साहस करके बोला 'किन्तु..............

वे बोल उठे 'इसमें किन्तु-परन्तु की बात नहीं है दिवाकर। मुझे सब कुछ स्वीकार है। मैं विवाह की पूरी तैयारी कर चुका हूँ। आगे जैसा और कहोगे कर दूंगा। मुझे तुमसे इतनी ही बात करनी थी।

दिवाकर क्षण भर चुप रह कर बोला 'जैसी आपकी इच्छा।'

वे बोले 'तो फिर गरमी ही में ठीक रहेगा ?

'जी-हाँ कह कर दिवाकर वहाँ से चुपचाप चला गया।

शीला बोली 'कर चुके बात बाबू जी से ?

'हाँ' दिवाकर ने कहा।

दिवाकर के आने से सारे घर में चहल पहल होगई, किन्तु दिवाकर के हृदय में अंधेरा था। वह रामनारायण से क्या कहेगा और कैसे मुँह दिखलायेगा ? रमा की याद आते ही उसके हृदय में एक मीठा सा दर्द होने लगता था। ऐसा मालूम पड़ता था उसे जैसे वह वर्षों से रमा से प्रेम करता चला आ रहा हो।

दिन भर का थका होने के कारण दिवाकर जल्दी ही जाकर पलंग पर लेट गया और सो गया।

शीला कहीं गई हुई थी। आकर उसने माँ से पूछा 'क्या सो गये ?

माँ बोली 'दिन भर के थके हुए थे। भोजन करते ही जा कर सो गये।

शीला ने स्वयं भोजन किया और दिवाकर के पास पहुँची।

दिवाकर वास्तव में खुर्राटे लेकर सो रहा था।

शीला कुछ देर तक खड़ी रही, फिर न जाने क्या सोच कर धीरे से झुक कर दिवाकर का शुभ ललाट चूम लिया।

दिवाकर चौंक कर उठ बैठा। शीला हँस कर बोली 'अभी से सोने लगे ?'

मुस्करा कर दिवाकर ने कहा 'यह कैसी हरकत तुम्हारी ?

हँस कर शीला बोली 'अपनी वस्तु पर मुझे अधिकार है। मैं जैसा चाहूँ। वैसा कर सकती हूं।आप बोलने वाले कौन ?

दिवाकर बोला'कहाँ चली गईं थी ?

शीला पलंग पर बैठती हुई बोली 'क्या अभी से आज्ञा चलाने लगे। मैं कहीं चली नहीं गई थी हुजूर, यों ही पड़ोस में एक सहेली से बात कर रही थी।'

दिवाकर हँसने लगा। शीला बोली 'मैं देख रही हूँ कि आपको नींद बहुत सता रही है, किन्तु में एक ही शर्त पर आपको छोड़ सकती हूँ।

'वह क्या ! ' दिवाकर ने पूछा।

सहसा शीला ने दिवाकर के ओठों को झुक कर चूम लिया तथा उठ कर खड़ी होगई 'बोली' बस अब जाती हूँ।

दिवाकर हँस कर बोला 'शैतान कहीं की !

शीला चली गई। दिवाकर ने मन ही मन में कहा ' रमा से नाता तोड़ना ही पड़ेगा। मगर कैसे—रामनारायण आग बबूला हो जायेंगे। फिर क्या किया जाय ! मैं हर बात में जल्दी कर जाता हूँ। फिर—

और वह सोचते सोचते सो गया।

+ + +

लखनऊ में दिवाकर को लौट कर आया हुआ सुन कर रामनारायण फौरन उससे मिलने आ पहुँचे। दिवाकर को

देखते ही बोले 'कब आये ?'

'कल रात को लौटा हूँ' दिवाकर ने कहा।

रामनारायण चुपचाप बैठ गये। दिवाकर का जी धड़क रहा था। उसने सोचा यदि कहना ही है तो अभी सब कुछ क्यों न कह दूँ ?

इतने में रामनारायण बोले 'अब जल्दी ही विवाह की तिथी निश्चित करना चाहिये। जून में कदाचित् विवाह निकलेगा।

अब दिवाकर क्या करे ? सिर खुजलाते हुए बोला 'किन्तु

रामनारायण का माथा ठनका।' बोले 'किन्तु कदाचित यह विवाह न हो सके।'

रामनारायण के पैरों के नीचे से धरती सी निकल गई। वे बोले 'यह क्यों ?'

दिवाकर बोला 'मेरे ससुर कदाचित् शीला से—

रामनारायण बोल उठे 'यह बात तो बहुत बुरी है दिवाकर। तुम्हें बहुत सोच समझ कर—

दिवाकर बोला 'आप जानते हैं कि उनकी बात टालना मेरे लिए कितना कठिन है। मैं तो राजी था—

कुछ रोष में आकर रामनारायण ने कहा 'यह बच्चों की सी बात तुम्हें शोभा नहीं देती दिवाकर। तुम्हें यह विवाह करना ही पड़ेगा। यदि ऐसा न हुआ तो मैं किसी को मुँह दिखलाने योग्य भी न रहूँगा।

दिवाकर। क्षण भर रुक कर बोला 'मैं आपकी कठिनाई को समझ रहा हूँ किन्तु मैं विवश हो गया हूँ।'

रामनारायण बोले ऐसी बातों में मैं आने वाला नहीं हूँ। मैं जानता हूँ कि तुम्हें विवश करने वाला कोई नहीं है। बहुत सोच समझ कर बात करना।

दिवाकर बोला आप जो चाहें कहें किन्तु—

एकाएक स्फुट-स्वर में रामनारायण बोले 'मैं यह पूछता हूं कि तुमने यह प्रस्ताव स्वीकार किया था या नहीं ?

'हाँ दिवाकर के मुंह से निकला।

'तो अब फिर किस मुंह से इंकार कर रहे हो ? 'रामनारायण ने पूछा।'

दिवाकर चुप रहा। रामनारायण ने दिवाकर के बढ़ कर दोनो हाथ पकड़ लिये और बोले 'मेरी इज्जत इस प्रकार बरबाद न करो दिवाकर। मैं कहीं भी मुंह दिखलाने योग्य न रहूंगा।

दिवाकर बड़े असमंजस में पड़ गया। रामनारायण बोले मैं तुम्हारे पैरों पड़ता हूं दिवाकर। तुम्हारा इंकार करना मेरी मत्यु ही समझना। सभी संबन्धियों और मित्रों में यह समाचार फैल गया है। रमा को स्वयं मालूम है और साथ ही साथ जिन अन्य व्यक्तियों के यहाँ विवाह की बातचीत चल रही थी उन्हें भी जवाब दे चुका हूँ। ऐसी परिस्थिति में तुम्हीं समझ लो कि हम लोगों की क्या दशा हो जायगी।

दिवाकर बोले 'रामनारायण जी' मैं सब कुछ समझता हूं किन्तु फिर भी आपको क्या बतलाऊं कि बनारस जाकर मैं किस परिस्थिति में पड़ गया। विवश होकर मुझे उन्हें स्वीकृति देनी पड़ी।

'स्वीकृति दे आयें—कहते हुए रामनारायण तन कर खड़े हो गये।

'हाँ' दिवाकर के मुँह से निकल गया।

'नीच ! कमीने !! क्या यही सभ्यता की बात है ?—उन्होंने काँपते हुए कहा।

दिवाकर आश्चर्य से उनके मुँह की ओर देखते हुए बोला 'आप क्या कह रहे हैं रामनारायण जी।

'तुम नीच नहीं तो और क्या हो ! उस काली-कलूटी और भद्दी शकल वाली लड़की के जादू में पड़ कर जो तुम एक कन्या-रत्न को ठुकरा रहे हो उसका फल तुम्हें भुगतना पड़ेगा दिवाकर। ओफ ! संसार में तुम्हारे जैसे भी मित्र हैं जो मित्र ही का गला काटते हैं। धिक्कार है तुमको।' कहते-कहते रामनारायण क्रोध से काँपने लगे।

दिवाकर धीरे से बोले 'आप उत्तेजना वश उन अपशब्दों को कह रहे हैं जिन्हें आपको न कहना चाहिये था रामनारायण जी। जब आप ठंडे दिल से विचार करेंगे तो आपको पश्चाताप ही होगा।'

रामनारायण सिर हिलाते हुए बोले 'यदि मेरे स्थान पर तुम होते तो ज्ञान और शान्ति की बातें तुम्हें न सूझतीं दूसरों का ठट्ठा इसी प्रकार उड़ाया जाता है।

दिवाकर चुप रहा। इतना बड़ा अपमान जीवन में कभी उसका न हुआ था किन्तु उसने समझ लिया कि रामनारायण की परिस्थिति में पड़कर कदाचित् प्रत्येक व्यक्ति यही करता।

दिवाकर को चुप देखकर रामनारायण भी कुर्सी पर बैठ गये। थोड़ी देर बाद बोले 'तो क्या तुम्हारा यही अन्तिम निर्णय है दिवाकर ?'

दिवाकर चुप रहा। रामनारायण फिर बोले 'मैं पूछता हूं कि क्या तुम इस पर पुनर्विचार कर सकते हो ?

दिवाकर ने नकारात्मक ढंग से सिर हिला दिया।

रामनारायण एक गहरी साँस लेकर धरती की ओरदेखने लगे।

अब दिवाकर बोला 'मैं यह मानता हूं कि मैंने आपको वचन दिया था किन्तु साथ में यह भी कह दिया था कि अन्तिम निर्णय बनारस से लौटने पर दूँगा। वहाँ जाकर मुझे जिस बात का डर था वही हुई। मैं लाख प्रयत्न करने पर भी उसने

'न' न कर सका। तुम जानते हो रामनारायण, वे लोग अपनी पुत्री की मृत्यु से दुखी हैं। उनसे मैं क्या कहता यह मेरी समझ ही में न आया ?

रामनारायण समझ रहे थे कि दिवाकर अब उन्हें बना रहा है। बोले समझ रहा हूँ सब कुछ। लोगों ने मुझसे कहा था किन्तु तब मैंने विश्वास नहीं किया।'

दिवाकर ने आश्चर्य से उनकी ओर देखते हुए कहा 'कौन सी बात ?'

खड़े होते हुए जरा व्यंग्य के साथ रामनारायण ने कहा 'जैसे तुम्हें कुछ नहीं मालूम।

दिवाकर बोला यदि आप बताना चाहें तो दूसरी बात है।

दरवाजे के पास पहुँच कर रामनारायण बोले 'कदाचित शीला वही लड़की है न जिसके लिए प्रसिद्ध है कि उसने अपने बहनोई दिवाकर नाथ के प्रेम में पड़ कर अपनी सगी बहिन को मृत्यु —

कड़क कर दिवाकर ने कहा 'चुप रहो रामनारायण अब एक शब्द भी यदि जिभ्या से बाहर हुआ तो दिवाकर को सहन न होगा। निकल जाओ, मेरे घर से।'

रामनारायण ने एक बार दिवाकर के मुँह की ओर देखा आप आ गये।

(१२)

रामनारायण के जाने के बाद दिवाकर का जी कुछ हलका हुआ उसे संतोष था कि वह सब कुछ खुलासा उनसे कह सका। अब शीला के लिए लगभग सब कुछ तय सा हो गया।

किन्तु रामनारायण की अन्तिम बात ने उसके हृदय में एक कीटाणु को जन्म दे दिया था। वह सोचने लगा कि 'क्या कभी

शीला ऐसा कर सकती है अपनी बहिन के साथ ? गलत ! यह त्रिकाल में भी संभव नहीं हो सकता।

विवाह के लिए कुल डेढ़ महीना रह गया था। इसी बीच में उसे तैयारी करनी थी। सगे संबंधियों को भी बुलाना था। वह सोचने लगा कि क्या करना चाहिए ?

उसके दूर के रिश्ते की एक विधवा बुआ थीं। दिवाकर ने उन्हें आने के लिए लिख दिया। बुआजी अपने पुत्र (जिनकी अवस्था लगभग २० वर्ष की थी) शम्भूनाथ को लेकर आगईं। घर में ज़रा रौनक आ गई।

बुआ बोलीं 'गहना तो काफी होगा दिवाकर तुम्हारे पास। उसी को तुड़वा कर शीला के नाप का जेवर बनवा लो। साड़ियों की कोई बात नहीं है—कुछ खरीद लाना और कुछ रक्खी हुईं काम आ जायगीं।

दिवाकर बोला "जैसा आप कहें। शीघ्र ही प्रबंध करूंगा।"

किन्तु दिवाकर रोज ही टालता जाता था। न जाने क्यों उसके हृदय में कुछ उत्साह न था। कभी कभी तो वह सोचता कि वह कुछ न करे, केवल बनारस जाकर चुपचाप विवाह करले।

बुआ ने जो सुना तो इसका विरोध किया। बोलीं ऐसी कौन तुम्हारी उमर चली गई है। दिवाकर ? क्या कोई दूसरा विवाह करता नहीं है ?

दिवाकर चुप होगया। न जाने क्यों उसे इन बातों में आनन्द न आता था। वह उत्साह हीन था।

शीला की चिट्ठी आई, लिखा था 'तैयारी में अपने को अधिक परेशान न करना संदूक से साड़ियों को निकाल कर छाँट लेना। जो धुलने लायक हों उन्हें धुलने और रंगने के लिए दे देना। बाकी में लोहा करवा कर रख देना अधिक कपड़ा

खरीदने की आवश्यकता नहीं है। बाद मे देखा जायगा। इत्यादि'

जब से उर्मिला की मृत्यु हुई थी तब से आज तक दिवाकर ने उसके किसी भी संदूक मे हाथ न लगाया था। न जाने क्यों उसे इससे बड़ा कष्ट मालूम पड़ता था। यही कारण था कि वह रोज टाल जाता था।

शीला का पत्र पाकर एक दिन वह कोठरी में घुस कर एक के बाद एक संदूक को खोलने लगा। उसने साड़ियाँ छाँट कर बाहर निकाल लीं और सन्दूकों को बन्द कर के ताले लगा दिए।

\+ + + +

शीला बोली 'उन्हें किसी बात की परवाह नहीं है। मा जैसा कहोगी मान जायेंगे। तुम व्यर्थ में रुपया मत खर्च करो।

मा बोली 'फिर भी हमारा जो कर्तव्य है उसे पूरा करना चाहिए। यदि और कहीं तेरा विवाह होता तो भरपूर रुपया खर्च करना पड़ता न?'

शीला हँस कर बोली 'यदि व्यर्थ की बातों में तुम्हें रुपया खर्च करना है तो वह सब मुझे दे दो न?'

मा बोली 'बड़ी आई रुपया लेने वाली। तुझे कुछ दूँगी भी नहीं, मुझे तो जो कुछ भी देना है दिवाकर को दूँगी। हमारा दिवाकर तो बिल्कुल भोला बाबा है।'

शीला चुप रही। मा ने कहा कई दिन गए हुए किन्तु दिवाकर की कोई चिट्ठी नहीं आई शीला?

शीला जरा इठला कर बोली तो मैं क्या करूं?

किन्तु शाम को डाकिया एक लिफाफा लाकर दे गया। प्रसन्न होकर शीला ने उसे ले लिया। किन्तु पत्र दिवाकर का न था। दिवाकर के नाम पत्र था।

मा बोली पढ़ देख क्या लिखा है।'

ज़रा उदास होकर शीला ने कहा उनकी चिट्ठी नहीं है।

किसी ने उन्हें पत्र भेजा है। इसी में काट कर लखनऊ का पता लिख दूँगी। उसके पास पहुँच जायगा।

मा चुप होगई। शीला अपने कमरे में जाकर लेट गई। उसने सोचा कि आखिर उन्हें किसने पत्र लिखा है। क्या खोल कर पढ़ूँ! किन्तु किसी का पत्र खोलना उचित नहीं है मगर है तो पत्र उनके नाम, यदि खोल कर पढ़ भी लूँ तो क्या वे नाराज होंगे!

शीला लोभ संवरण न कर सकी। उसने सिरहाने से लिफ़ाफा उठा लिया और पता पढ़ने लगी डाकखाने की मोहर यद्यपि बहुत साफ न थी फिर भी लखनऊ साफ तौर से उसने पढ़ लिया।

धीरे से लिफ़ाफ़ा फाड़ कर उसने पत्र निकाल लिया और पढ़ने लगी उसमें लिखा था:—

प्रिय दिवाकर—

तुम बनारस में ही जाकर बैठ गये। कब तक लौटोगे! विवाह की तिथि २२ जून निकली है। क्या यह ठीक रहेगी! तुम आओ तो और बातें तय की जायं। रमा के गहनों का नाप तुम्हें यहाँ आने पर दूँगा। मुझे भी काफी तैय्यारियाँ करनी हैं। तुमने रमा के साथ विवाह स्वीकार करके मेरा बड़ा उपकार किया है 'मैं पहिले ही से जानता था कि तुम्हें शीला की अपेक्षा रमा ही अधिक पसन्द आयेगी।

तुमने कहा था जल्द ही लौटूँगा फिर देर क्यों लगा दी। तुम्हारी आज्ञानुसार विवाह में अधिक धूमधाम न होगी।

तुम्हारा

रामनारायण

शीला के हाथ से पत्र गिर पड़ा और बड़ी देर तक वह बेसुध सी पड़ी रही। इतना बड़ा धोखा! ये ऐसे निकलेंगे।

वह परेशानी से बड़ी देर तक छटपटाती रही फिर उठकर

बैठ गई। उसने सोचा कि वह सब कुछ अभी मा से जाकर कहदे, किन्तु वह स्वयं क्षोभ और लज्जा से गड़ीं जारही थी। अन्त में वह रो पड़ी। वह चुपचाप पलंग पर लेट गई।

काफी शाम हो जाने पर भी जब शीला न उठी तो मा ने उसे जाकर उठाया। उसे उदास देखकर मा ने कहा 'क्या बात है शीला ! क्या तबियत ठीक नहीं है ?

शीला उदास भाव से बोली 'कुछ नहीं मा, यों ही सिर में थोड़ा दर्द है।'

मा उसके सिर पर हाथ रखकर बोलीं 'चाय बनवा दू बेटी ! अभी दर्द चला जायगा।

सिर हिलाते हुए शीला बोली 'नहीं मा, सब ठीक होजायगा।

और एकाएक वह फूट कर रो पड़ी। मा घबड़ा गई, बोलीं क्या बात है बेटी ! क्या दिवाकर ने कुछ लिखा है ! बतला दे मेरी रानी !

और उन्होंने शीला को स्नेह से चिपटा लिया। शीला हिचकियाँ भर कर रो रही थी मा और घबड़ाई। उन्हें अधिक घबड़ाया देख कर शीला ने वह पत्र उठा मा को दे दिया।

मा ने पत्र पढ़ा और थोड़ी देर तक मौन रहीं, फिर बोलीं 'तो इतना घबड़ाने की क्या बात है ? दिवाकर ने तो कुछ लिखा नहीं। सम्भव है यह किसी की चाल हो।'

शीला चुप रही।

उसके सिर पर हाथ फेरते हुए मा ने कहा 'विवाह शादियों में लोग अक्सर ऐसे अड़ंगे लगाने की चेष्टा करते हैं। मेरा दिवाकर ऐसा नहीं है।'

शीला कुछ बोली नहीं ! मा ने कहा 'मैं अभी दिवाकर को पत्र भिजवाती हूँ। यह तो मुझे भी मालूम है कि दिवाकर साफ हृदय है वह तो स्वयं साफ तौर पर कह सकता था

कि मैं विवाह न करूंगा। तू घबड़ा मत।

किन्तु शीला को सांत्वना न मिली। वह समझ गई कि इस पत्र का आधार कुछ न कुछ है अवश्य। वह रामनारायण और रमा दोनों ही को जानती थी। रमा कितनी सुन्दर, सुसभ्य और पढ़ी लिखी है यह भी उससे छिपा न था। वह निराश हो गई।

दूसरे दिन मा ने कहा 'तू स्वयं दिवाकर को एक पत्र लिख दे। कुछ उत्तर तो अवश्य आयगा ही।'

दृढ़ता के साथ शीला ने कहा 'मैं अब पत्र न लिखूंगी मा। मैं और अधिक अपमान सहन नहीं कर सकती।

मा चुप हो गईं। शीला बोली 'मैंने कभी अपने स्वार्थ के वश ऐसा प्रस्ताव उनसे नहीं किया था। मैं तो सुधाकर की ओर देखती थी। यदि वे नहीं चाहते तो उनकी मर्जी। अपना उन पर अधिकार ही क्या ?

थोड़ी देर तक मा उसके मुँह की ओर देखती रही, फिर बोलीं 'तुम्हारे बाबूजी ने आज सबेरे ही उन्हें पत्र लिख दिया है। दो दिन में जवाब आ जायगा।

शीला नीची दृष्टि किये हुए बोली 'मुझ में अब कुछ उत्साह नहीं रह गया है मा। अब तो मेरा मन—

और वह चुप हो गई। मा बोलीं 'तू तो एक दम से घबड़ा उठती है शीला। अभी दिवाकर ने स्वयं तो कुछ नहीं लिखा।

शीला का दिल भरता चला जा रहा था। वह उठकर कमरे में जा लेटी और रोने लगी।

(१३)

दिवाकर को ससुर का पत्र पढ़कर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसमें लिखा था 'हमको पता चला है कि दिवाकर तुमने कहीं अन्यत्र अपना सम्बन्ध ठीक कर लिया है। तुम जानते हो कि इससे शीला को कितना दुःख हुआ। तुम कहोगे कि आपको

कैसे मालूम हुआ ? मैं कहूँगा कि कोई बात बिना प्रमाण के कहीं कही जाती। यदि वास्तव में यह बात गलत है तो हमको अत्यन्त प्रसन्नता होगी।

'इधर कल से शीला ने अन्न का दाना भी नहीं छुआ है। तुम्हारा पत्र न आने तक हम लोग परेशान रहेंगे। तुम्हारे पत्र की प्रतीक्षा है।'

क्या बात है ? कहीं रामनारायण की बदमाशी तो नहीं है' दिवाकर सोच कर परेशान हो गया।

उसने पत्र लिखा:—

प्रिय बाबूजी,

आपका पत्र आश्चर्य के साथ पढ़ा। खेद है कि आप लोगों के हृदय में मेरे प्रति ऐसी भावना भी उत्पन्न हुई और शीला को क्या कहूँ वह तो मुझे भली भाँति जानती है।

किसी ने मेरे विरुद्ध कुछ लिख कर ही आपको भ्रम में डाल दिया है। खेद !

विशेष क्या लिखूँ ?

दिवाकर

पत्र को लिफाफे में बन्द करके वह सोचने लगा कि अवश्य रामनारायण ही ने कुछ लिख दिया होगा और उसे पढ़कर ये लोग घबड़ा गये होंगे।

उसने स्नान किया और कपड़े पहिन कर बाहर जाने की तैयारी कर ही रहा था कि बुआजी बोलीं तुमने जेवर बनने को दे दिया दिवाकर

'हाँ' दिवाकर ने कहा।

'और साड़ियाँ ?' बुआ ने पूछा।

साड़ियाँ जो रंगने के लिए उस दिन दिवाकर ने निकालीं थीं वह सब अभी तक मेज पर रक्खी हुई थीं। हँस कर बोला

'साड़ियों को तो ले जाना भूल ही गया था बुआजी। अच्छा अभी लिए जाता हूँ। आपने देख लीं न।

बुआजी साड़ियाँ खोल खोल कर देखने लगीं। नीली साड़ी खोलते ही कोई चीज़ 'फट' से बाहर गिर पड़ी। बुआ ने उसे उठाकर दिवाकर को देते हुए कहा 'यह लिफाफा उसमें रक्खा था।'

दिवाकर ने उर्मिला की लिखावट पहचान की। पत्र पुराना सा था और उस पर उर्मिला ने अपने हाथ से अपने पिता का पता लिखा था कदाचित वह चिट्ठी भेजी नहीं गई थी। उर्मिला ने उसे साड़ी की तह में रख दिया था।

दिवाकर ने धीरे से उसमें से चिट्ठी निकाल कर पढ़ना शुरू किया।

पत्र में लिखा था:—

आदरणीय बापूजी,

आपका पत्र मिला। आप शीला के विषय में किसी प्रकार की चिन्ता न करें। वह आनन्द के साथ पढ़ रही है। छुट्टियों में उसे बनारस भेज दूंगी। हम सब लोग उसके साथ ही आयेंगे।

शीला के यहाँ रहने से हमारा मन भी लगा रहता है। मैं उसे बहिन नहीं, वरन पुत्री की भाँति समझती हूँ।

ये तो उसे रात के वक्त पढ़ाते हैं रोज। शीला को पुत्री से भी अधिक चाहते हैं।

मैंने शीला को साड़ियाँ खरीद दी हैं। आप दाम की चिन्ता न करें। मैं मंगा लूंगी आपसे।

सुधाकर प्रसन्न हैं।

आपकी पुत्री
उर्मिला

'शीला को पुत्री से भी अधिक समझते हैं।' पढ़कर दिवाकर के एक धक्का सा लगा। 'तब क्या शीला ने झूठ ही कह दिया कि वे मरते समय मुझे आपको सौंप गई हैं ?' वह कुर्सी पर बैठ गया।

बुआ अब तक साड़ियाँ देख रही थीं। उन्हें अच्छी तरह तहा कर बोलीं 'ठीक है। इन्हें आज ही रंगने के लिए दे आना दिवाकर।'

'अच्छा' बैठे ही बैठे दिवाकर बोला।

बुआ अन्दर चली गईं। दिवाकर ने धीरे से कपड़े उतार दिये और उर्मिला के पत्र को बार बार पढ़ने लगा। अन्त में उसने उसे लिफाफे के अन्दर बन्द करके रख दिया।'

दिवाकर यों ही लगभग घण्टे भर तक बैठा सोचता रहा।

अन्त में उसके मुँह से निकला 'न' अब ऐसा कभी नहीं हो सकता। उर्मिला की आत्मा क्या कहेगी ? उस समय मैंने इस बात पर गौर ही न किया कि आखिर उर्मिला मृत्यु के समय इस बात को मुझसे ही कहती। शीला ने अवश्य झूठ कहा।

वह बेचैनी से उठ कर टहलने लगा। बार बार उसके मुँह से निकला 'अब क्या होगा ?

बुआ ने आकर कहा 'गये नहीं दिवाकर तुम ?'

दिवाकर धीरे से बोला 'फिर देखा जायगा। तुम अपना काम करो।'

दिवाकर का मुंह देखती हुई बुआ चली गईं।

दिवाकर लेट गया।

दिवाकर प्रारम्भ ही से भावुक था। स्पष्टवादिता और सत्य से उसे प्रेम था। पाठकों को भलीभाँति ज्ञात है कि सब कुछ होते हुए भी वह उर्मिला के प्रति अटूट स्नेह और सम्मान रखता था। यदि शीला का प्रश्न न होता तो कदाचित

उसकी भावुकता उसे इतनी जल्दी विवाह के लिए राजी न होने देती। स्वर्गीया उर्मिला की इच्छा जान कर ही वह शीला से विवाह के लिए फौरन तैयार होगया था। रमा के पाने की लालसा का बलिदान उसने इसी बात को लेकर किया। वह प्रसन्न था कि उसने उर्मिला की अन्तिम इच्छा का उल्लंघन नहीं किया। किन्तु आज यह जान कर उर्मिला के वास्तविक भाव क्या थे। उसे शीला के झूठ बोलने पर बड़ा कष्ट और क्षोभ हुआ। उसने समझ लिया कि ऐसी बात कह कर शीला ने उसके मर्मस्थल पर प्रभाव डालने की चेष्टा की है।

'यदि उर्मिला उसे मेरी पुत्री के रूप में देखती आई है तो फिर क्या उसी के साथ..............ऐसा कदापि न होगा ! न हो सकेगा।

और उसने उठ कर अपने श्वसुर की लिखी हुई चिट्ठी के टुकड़े टुकड़े कर दिये।

दिवाकर को बेचैनी बढ़ गई थी। शीला को लेकर जो उसने रमा को ठुकरा दिया था इसका उसे बड़ा रंज था। वह जितना सोचता था उतना ही वह इन सब बातों के लिए शीला ही को उत्तरदायी पाता था। ओह, मेरा सब कुछ चला गया—उर्मिला गई रमा गई और शीला भी—क्या पुत्री से विवाह करूं ?

उसका जी चाहता था कि सब कुछ छोड़कर कहीं एकान्त में भाग जाऊं साथ में केवल उर्मिला का चित्र लेकर—उसकी स्मृति लेकर।

आज उसके स्मृति मण्डल पर उर्मिला घूम उठी। कितने अच्छे थे वे दिन ? आनन्द, रोष—संघर्ष; सभी कुछ तो था। वही जीवन था। बिना संघर्ष के जीवन का आनन्द उस भोजन के समान है जिसे हम रोज खाते हैं बिना किसी विशेषता के।

कहाँ गये वे दिन ? कहाँ गई उर्मिला और—

दिवाकर फूट कर रो पड़ा।

किसी ने आवाज़ दी 'खाना' खा लीजिए चल कर भाई साहब !'

दिवाकर अपनी वास्तविक स्थिति छिपा कर बोला 'तुम खा लो शम्भू। आज मुझे भूख नहीं है।'

(१४)

शीला ने दिवाकर का पत्र पढ़ा। लिखा था—

आदरणीय बाबूजी,

आपका पत्र मिला। कुछ अनावश्यक परिस्थितियों ने आकर मेरे विचारों को बदल दिया है। अब कदाचित मैं विवाह—बन्धन में न बंध सकूंगा।

मैं स्पष्ट ही कह रहा हूँ। संभव है भविष्य में ऐसा करूं भी तो शीला से मेरा विवाह असम्भव है। अभी तो कहीं भी संभव नहीं है। वहाँ भी नहीं जहाँ के विषय में सुन कर ही कदा· चित आपने मुझे पत्र लिखा था।

आशा है आप क्षमा करें मेरी असमर्थता को। इस विषय में किसी भी प्रकार की बात चीत अब बिना निष्कर्ष के होगी। शीला से भी मेरी ओर से क्षमा माँग लीजिएगा।

कारण मैं न लिख सकूंगा। सब बातों को मैं भावना ही से देखता हूँ। मेरा और शीला का विवाह कठिन ही नहीं वरन असंभव है।

मैं बाहर जा रहा हूँ अभी इसी समय। अतएव किसी प्रकार का पत्र व्यवहार अब आगे असंभव है।

माता जी को प्रणाम। शीला को स्नेह।

आशा है सुधाकर जहां है वहाँ प्रसन्न है ।

आपका

दिवाकर

शीला ने पढ़ा, निश्वास ली और बेसुध सी लेट गई ।

मा ने कहा तू इतना परेशान क्यों हो रही है शीला ! क्या दुनियाँ में दिवाकर ही रह गया है !

शीला स्तब्ध सी थी, धीरे से बोली 'मुझे किसी बात की चिन्ता नहीं है मा । जब मेरी चिन्ता करने वाली स्नेहमयी बहिन ही इस संसार में न रही तो ....

शीला फफक फफक कर रो उठी । मा बोली 'तू पढ़ी लिखी होकर भी ऐसी बात करती है । विवाह क्या अब ....

रोते हुए शीला बोली 'तुम क्यों बार बार विवाह की बात करके मुझे परेशान कर रही हो ! मैंने कब तुमसे कहा कि मैं विवाह करूंगी ।

मा चुप रही । वह शीला की वेदना और अपनी भूल समझ रही थी । शीला बोली 'तुम कुछ चिन्ता न करो मा । मुझे किसी प्रकार का दुःख नहीं है । और वह मा से लिपट गई ।

मा बोली 'अच्छा बाबा न करना विवाह । मगर इन बातों को तो भूल जाना ही है मेरी रानी !'

\+ + + +

शीला की मा ने कहा 'दुःखी हो गई बेचारी दिवाकर को बहुत चाहती है । मगर क्या करूं !

पिताजी ने कहा दिवाकर तो ऐसा है नहीं । मेरी समझ में नहीं आता कि आखिर क्या बात हो गई । यह तो बड़ा गड़-बड़ हुआ ।

मा ने सोचकर धीरे से कहा 'तो फिर और कोई लड़का

तलाश करो। इस भरोसे पर बैठ कर तुमने और भी तो कहीं लड़का नहीं देखा।'

पिता बोले 'कोई क्या जानता था कि दिवाकर ऐसा करेगा कुछ समझ में नहीं आया।'

और वे चले गये। शाम को सुरेश को बुलाकर माँ ने कहा 'जा, आज बहिन को कहीं सिनेमा दिखा ला।'

सुरेश माँ का मुँह देखने लगा। आज तक तो माँ ने सदा सिनेमा जाने का विरोध किया था।

सुरेश शीला से ३ वर्ष बड़ा था किन्तु सीधे और सरल स्वाभाव का होने के कारण उससे छोटा लगता था।

शीला सिनेमा जाने के लिए तैयार नहीं हुई। सुरेश समझा कर हार गया।

\+ \+ \+

लगन टल गई थी अतएव शीला के विवाह का कहीं अन्यत्र प्रबन्ध न हो सका। रामाशंकर ने फिर दिवाकर को कुछ न लिखा। वे दिवाकर से बिगाड़ करना न चाहते थे।

इधर दिवाकर ने बुआ से स्पष्ट बतला दिया कि उसका इरादा अभी विवाह का नहीं है। झल्लाकर बुआ ने कहा तो फिर मुझे बुलाकर क्यों परेशान किया ?

हँसकर दिवाकर बोला 'तो फिर क्या तुम मुझे छोड़कर जा भी सकती हो बुआ ? अब तुम्हें यहीं रहना पड़ेगा।

बनावटी क्रोध के साथ बुआ बोली 'तू बड़ा नटखट है दिवाकर।'

बुआ का प्रेम से हाथ पकड़ कर दिवाकर बोला 'तुमसे नटखटपना न करूंगा तो अब किससे करूंगा बुआ। तुम्हीं तो मेरी माँ हो।'

बुआ ने स्नेह से दिवाकर की ओर देखा। दिवाकर बोला

'तुम भी यहीं रहोगी और शम्भू भी। मेरा काम काज शम्भू देखेगा। तुम किसी बात की चिन्ता न करो।'

बुआ प्रसन्न थीं, बोली 'जैसा तू कहे वैसा ही करूंगी।' मेरे लिए जैसा शम्भू वैसा तू।

क्षण भर ठहर कर दिवाकर बोला 'कुछ दिनों के लिए मैं बाहर जाना चाहता हूं बुआ। तुम और शम्भू घर को संभालना।'

बुआ बोली कब तक लौटेगा।

सिर खुजलाते हुए दिवाकर ने कहा 'कुछ ठीक नहीं है। संभव है बहुत दिनों में लौटूं।'

बुआ चुप रहीं।

दिवाकर फिर बोला 'शम्भू को एक छोटी-मोटी दूकान करवा दूंगा लौट कर। लड़का सीधा तथा बुद्धिमान है।'

बेटे की प्रशंसा सुनकर गद्गद् हो गई। बोली बड़े कष्टों पाला है इसे दिवाकर। आठ वर्ष का था जब (आँखों में आंसू भर कर) बिना बाप का हो गया।

दिवाकर बोला 'सब कुछ ईश्वर करता है बुआ! शम्भू के लिए किस बात की कमी है।'

कुछ सोच कर बुआ बोली 'तुमने विवाह क्यों रोक दिया अपना दिवाकर ? क्या लड़की पसंद न थी।'

दिवाकर निरुत्तर रहा बुआ ज़रा मुस्किराकर बोली 'लोग कहते हैं कि लड़की ज्यादा अच्छी न थी क्यों न !'

दिवाकर का ध्यान कहीं और था, धीरे से बोल गया 'कुछ ऐसा ही समझ लो।'

बुआ बोली 'तो फिर कोई और लड़की तलाश करूं ?'

'न बुआ। इसकी अभी आवश्यकता नहीं है' कहता हुआ दिवाकर बाहर चला गया।

बुआ के मुँह से निकला 'अभी लड़कपन है दिवाकर में।'

(१५)

दिल्ली में जिस मित्र के यहाँ जाकर दिवाकर ठहरा था वे उसके दूर के सम्बन्धी भी थे। नाम था उसका प० विद्याभूषण।

दिवाकर और विद्याभूषण सहपाठी थे। दोनों ही लखनऊ यूनीवर्सिटी के छात्र थे। विद्याभूषण इस समय सेक्रीटेरियट में एक उच्च पद पर था। पति पत्नी और एक छोटा भाई वाणीभूषण ही केवल इस परिवार के सदस्य थे। वाणीभूषण दिल्ली विश्वविद्यालय के बी० ए० क्लास का विद्यार्थी था। वह होस्टल में रहता था।

उर्मिला की मृत्यु के बाद विद्याभूषण ने कई पत्र दिवाकर को लिखे थे जिसमें दिल बहलाने के लिए कुछ दिनों के लिए उसे दिल्ली आमंत्रित किया था। अपनी इस उद्विग्न परिस्थिति में दिवाकर ने यहीं आना उपयुक्त समझा। अभी वह कल ही दिल्ली आया है।

और वास्तव में यहाँ आकर उसका दिल कुछ बहल गया। विद्याभूषण ने अपने कई साहित्यिक मित्रों से उसका परिचय करा दिया था, उन्हीं के संसर्ग में उसके दिन व्यतीत होते। दिवाकर के हृदय की व्यथा भी दबने सी लगी। रात के वक्त विद्याभूषण से काफी देर तक बातचीत होती और विद्यार्थी-जीवन की स्मृतियाँ हरी हो उठतीं।

एक दिन विद्याभूषण एकाएक पूछ बैठे और रामनारायण का क्या हाल है दिवाकर ?

दिवाकर को एकाएक भूली कहानी याद आ गई। वह

चुप रहा।

विद्याभूषण बोले 'क्या करते हैं रामनारायण लखनऊ में मनहूस तो ऐसा है कि कभी पत्र नहीं लिखता। तुमसे भेंट होती है क्या ?'

दिवाकर ने अपना किस्सा विस्तारपूर्वक बतला दिया। कुछ देर चुप रह कर विद्याभूषण बोले तुमने अच्छा ही किया दिवाकर। जो जैसा करता है वैसा भरता है। रामनारायण इसी लायक हैं।'

दिवाकर विद्याभूषण के मुंह की ओर देखने लगा। कुछ देर तक चुप रह कर विद्याभूषण ने कहा 'मेरे साथ भी वे ऐसी ही हरकत कर चुके हैं।'

'अच्छा' आश्चर्य के साथ दिवाकर के मुंह से निकला।

धीरे से विद्याभूषण ने कहा 'मेरा छोटा भाई वाणीभूषण बी० ए० में पढ़ता है। इधर दो वर्षों के अन्दर उन्होंने कई बार मुझे रमा के विवाह के लिए लिखा। यद्यपि वाणी अभी विवाह नहीं करना चाहता था फिर भी मैंने रामनारायण और अपनी मित्रता को चिरत्व देने के लिए गत वर्ष उक्त प्रस्ताव को मान लिया। सब कुछ तय हो गया और फलदान भी चढ़ गया। एकाएक गत अप्रैल के महीने मे उन्होंने मुझे एक पत्र लिख दिया कि लड़की विवाह के लिए राजी नहीं है अतएव विवाह सदा के लिए स्थगित किया जाता है।'

'आयें' दिवाकर के मुंह से निकला।

क्षण भर चुप रह कर विद्याभूषण ने कहा 'मैं चुप रह गया। बाद में पता चला कि उन्होंने लखनऊ में इस बात का प्रचार किया कि लड़का बदसूरत है और लड़की ने इसीलिए विवाह से इंकार कर दिया। बोलो' कितनी बुरी बात है।

दिवाकर को याद आगया कि कदाचित उसी के साथ रमा

का विवाह तय हो जाने से ही रामनारायण ने ऐसा किया होगा। वह चुप रहा।

विद्याभूषण कहते गये 'अब तुम्हारे मुंह से सारा हाल सुन कर मैं समझ गया कि उन्होंने उन्ही को फाँस लिया था। तभी तो मुझे संतोष है कि जैसा उन्होंने मेरे साथ किया था वैसा ही तुमने उन्हें फल दे दिया।'

किन्तु दिवाकर इस बात से प्रसन्न न था। उसे रामनारायण के प्रति किये गये व्यवहार पर अब भी खेद था। वह चुप रहा।

विद्याभूषण बोले 'मेरा भाई सुन्दर है या बदसूरत यह तो तुम जब कल उसे देखोगे तो स्वयं बतला दोगे। वह रविवार के दिन होष्टल से घर आता है रामनारायण जी अपनी लड़की को हूर की परी समझते हैं।'

दिवाकर ने बात बदलने की नीयती से कहा 'यदि दिल्ली से एक सुन्दर सी मासिका पत्रिका प्रकाशित की जाय तो कैसा रहे ?'

कुछ मुस्करा कर विद्याभूषण ने कहा 'क्या तुम्हें भी पागलपन सूझ रहा है। अरे भाई, दिल्ली तो उर्दू का गढ़ है। यहाँ हिन्दी का प्रचार अभी नाम मात्र के बराबर है।'

दिवाकर बोला 'तुम यह बात व्यापारिक दृष्टिकोण से कह रहे हो कदाचित ? तो मैं प्रचार की बात कर रहा हूँ। संभव है आगे चल कर यह दृष्टि-कोण बदल जाय और हमको दोनों ही दृष्टि-कोणों से सफलता मिले।'

विद्याभूषण थोड़ी देर चुप रह कर बोले 'हो सकता है। यहाँ पहिले मेरे एक मित्र पं० रामचन्द्र शर्मा 'महारथी' नामक मासिक पत्रिका निकाला करते थे किन्तु अब तो वह भी बन्द हो गई। कदाचित आर्थिक कठिनाइयों के कारण ही ऐसा करना

पड़ा हो।

दिवाकर बोल उठा 'हाँ हाँ' मैं भी उस पत्रिका में यदा-कदा लिखा करता था, क्या शर्मा जी उसे फिर से प्रकाशित करने पर तैयार न होंगे। वह तो बड़ी अच्छी पत्रिका थी।'

विद्याभूषण बोले 'वे परिश्रमी जीव हैं। उनकी सी लगन का व्यक्ति मैंने कदाचित ही कभी देखा हो। कहो तो बात करूं ?'

दिवाकर ने कहा 'मैं स्वयं उनसे परिचित हूँ। यदि समय मिला तो बात करूंगा।'

विद्याभूषण बोले 'किसी जमाने में साहित्यिक क्षेत्र में यहाँ उनकी तूती बोलती थी। प्रति शनिवार को साहित्यिकों का जमघट उनके घर पर लगता था, किन्तु कदाचित लोगों ने उनका साथ नहीं दिया।'

सिर हिलाते हुए दिवाकर ने कहा 'हाँ' जानता हूँ। आचार्य चतुरसेन शास्त्री, श्री जैनेन्द्र, श्री ऋषभकुमार जैन तथा अन्य कितने ही साहित्यिक शर्मा जी के ही अखाड़े के पहलवान हैं। मेरी इन लोगों से कई बार यहीं भेंट हुई।

विद्याभूषण को नींद आ रही थी, बोले अब भाई सोने जा रहा हूँ। फिर बात होगी।

हँसकर दिवाकर बोला 'हाँ भाई जाओ। भाभी जी मुझे गालियां दे रही होंगी।'

विद्याभूषण ऊपर चले गये। थोड़ी देर बाद दिवाकर भी सो गया।

दूसरे दिन जब दिवाकर उठा तो उसने विद्याभूषण को अपने कमरे में एक नवयुवक के साथ आते देखा।

विद्याभूषण ने नवयुवक की ओर इशारा करते हुए कहा 'यह है मेरा छोटा भाई वाणी।'

वाणी ने हाथ जोड़ कर दिवाकर को प्रणाम किया।

प्रणाम का उत्तर देते हुए दिवाकर ने कहा 'अच्छा' आप ही दिल्ली विश्वविद्यालय में पढ़ते हैं।' आइये।

दोनों बैठ गये। दिवाकर ने कहा 'आज तो रविवार है। कहीं चलने का प्रोग्राम रहे तो कैसा हो ?'

विद्याभूषण ने कहा 'मैं तो आज कुछ कार्यों में व्यस्त हूँ आज। वाणी और अपनी भाभी को लेकर तुम जा सकते हो।'

दिवाकर चुप रहा। वाणी बोला 'चलिए आज पुराने किले तक घूम आयें ?'

दिवाकर बोला अच्छी बात है।

दोनों चले गये।

दिवाकर ने देखा कि वास्तव में वाणीभूषण को बदसूरत ही कहा जा सकता है। काला रंग, मुँह पर व्यक्त चेचक के दाग़ और चेहरे का कट भी भद्दा सा। रमा का और उसका जोड़ा कितना अस्वाभाविक होता ! उसने शान्ति की साँस ली रमा से योग्यता और शिक्षा में भी कम—इससे बढ़कर भी अनमेल विवाह और क्या हो सकता था।

उसने सोचा 'विद्याभूषण इतना सुन्दर तथा उसकी स्त्री....

विद्याभूषण की पत्नी छाया भी अत्यन्त ही साधारण श्रेणी की सुन्दर थी। दबा हुआ रग, चेहरा भी साधारण और शारीरिक गठन भी अप्रिय।

दिवाकर सोचने लगा 'तब क्या विद्याभूषण ने रुपयों के लिए ही विवाह किया ? छाया बड़े घर की लड़की थी। नौकर और रहने के लिए घर उसे उसके श्वसुर द्वारा ही मिले थे।

हमारे देश की विवाह-प्रणाली भी अधिकाशंतय: व्यापारिक दृष्टिकोण को ही लेकर आगे चलती है। प्राय: बहुत पढ़े लिखे पति की पत्नी अपढ़ तथा मूढ़ और अशिक्षित पति की पत्नी

अपढ़ है। यही नहीं, शारीरिक सौंदर्य में भी विषमता घर-घर देखने को मिलेगी। पति महान असुन्दर और पत्नी उर्वशी के समान सुन्दरी, पति महोदय की सुन्दरता जहाँ कामदेव को लज्जित करती है वहाँ उनके पल्ले बंधी होती है आबनूस के कुन्दे के समान पत्नी। इसका परिणाम जैसा होना है उसका अनुमान आप स्वयं लगा सकते हैं। समाज को नैतिक पतन की ओर लेजाने का यह एक मूक कारण है। इसकी तह में रहता है स्वार्थ, आर्थिक लाभ और उप जाति-प्रथा के बंधन। यह अनैक्यता और विषमता को हम अच्छी दृष्टि से नहीं देखते—और दिवाकर भी किन्ही अर्थों तक भुक्त—भोगी रह चुका है।

(१६)

दिवाकर को दिल्ली आये लगभग दो मास हो चुके थे। उसका मन यहाँ लग गया था उसने एक छोटी सी साहित्यक-गोष्ठी बना ली थी और उसी में मस्त रहता था। एकाएक एक दिन उसके मन में आया कि अब घर लौटना चाहिए।

छाया ने जब सुना तो मुस्किराकर बोली 'वहाँ कौन बैठा है देवरजी' आपके लिए जो आप जाने के लिए उतावले हो रहे हैं।

दिवाकर हँसकर बोला 'काफी दिन तो हो गए मुझे आप लोगों की छाती पर मूंग दलते हुए। एक न एक दिन तो जाना ही है।'

छाया आँखें मटका कर बोला 'हम लोग तो नहीं चाहते कि आप अभी जायें। मेरा तो मन भी न लगेगा आप के जाने से।'

और वह मुस्करा दी। इधर बराबर दो महीने छाया ने

दिवाकर को जीतने की निरन्तर चेष्टा की है किन्तु स्वभावतय: दिवाकर उससे दूर ही दूर रहा है ।

वह बोला 'आप लोगों को मेरे यहाँ रहने से कष्ट ही हुआ है भाभी जी। अब तो आज्ञा मिलनी चाहिए ।'

हंस कर छाया बोली 'किन्तु मेरा मन तो अभी भरा ही नहीं है। और फिर वाणी के विवाह में भी तो आपको सम्मि-लित होना है।'

दिवाकर बोला 'तब की बात तब से है। जब विवाह में स्वयं आजाऊँगा।'

छाया बोली 'वाह' विवाह के दिन ही कितने रह गये हैं। अब कब—

कुछ आश्चर्य के साथ दिवाकर बोला 'तो क्या विवाह निश्चित हो गया !'

मुस्करा कर छाया बोली 'और नहीं तो क्या ; लड़की पढ़ी लिखी तथा हुशियार है। हमारी तरह गमार और मूर्ख नहीं है।'

कह कर छाया हँस दी। दिवाकर बोला 'अच्छी बात है। विद्याभूषण से बात करूंगा। कहाँ ठीक हुआ है ?'

छाया बोली 'बनारस में।'

दिवाकर उसका मुंह देखने लगा।

छाया बोली 'कुल २०–२५ दिन रह गये हैं। अभी सारी तय्यारी करना है। आप जा कैसे सकते हैं ?'

दिवाकर चुप रहा।

शाम को उसे विद्याभूषण ने बतलाया कि वास्तव में वाणी का विवाह तय हो गया है। उसने बताया है कि लड़की देखने सुनने में अच्छी और पढ़ी लिखी है। हाँ, आदमी बहुत बड़े नहीं हैं फिर भी विवाह अच्छा होगा।

दिवाकर ने धीरे से पूछा बनारस में किसके यहाँ विवाह ठीक हुआ है।

कुछ रुक कर विद्याभूषण ने कहा 'पं० रामशंकर बाजपेयी के यहाँ।'

दिवाकर आँख फाड़ कर रह गया।

+ + + +

दिवाकर फिर दिल्ली में रुका नहीं। वह सब कुछ समझ गया था। किन्तु उसने विद्याभूषण को कुछ बताया नहीं। शीला वाणीभूषण को कितना पसंद करेगी यह वह जानता था। किन्तु इससे उसको क्या ? वह कौनसा मुँह लेकर इस विवाह को रोक सकता था। केवल एक पत्र को पढ़कर उसने जो शीला का भावुकतावश तिरस्कार किया था उसे वह भूला न था। शीला के साथ वाणी का सम्बन्ध उसके हृदय में एक धक्का सा मारता था। न जाने क्यों वह इस काण्ड का उत्तरदायी अपने को समझाता था। उर्मिला की आत्मा क्या इस विवाह से प्रसन्न होगी ? आर्थिक अभाव के कारण ही कदाचित रामशंकर ने यह सम्बन्ध विवश होकर स्वीकार किया होगा। क्या वह उनकी सहायता नहीं कर सकता ? किन्तु वह किसी मुँह से अपनी उदारता उन्हें दिखाने जा सकता था ?

वह हृदय में एक वेदना लेकर लखनऊ से गया था और दूसरी लेकर लौटा। उसने सोचा कि वह शीला को एक पत्र लिखे, किन्तु कड़े प्रत्युत्तर की आशंका से उसका साहस न हुआ वह चुप रहा।

आठ दस दिन बाद उसे रामशंकर का एक पत्र मिला जिसमें शीला के विवाह में सम्मिलित होने की प्रार्थना की गई थी। दिवाकर कई दिन तक उसका उत्तर देने में असमर्थ रहा।

विवाह के '४ ५ दिन शेष रह गए थे। बहुत कुछ सोच

विचार कर तथा उपहार के लिए बहुत से आभूषण और साड़ियाँ लेकर वह बनारस के लिए चल दिया। उसे विद्याभूषण की ओर से भी निमंत्रण मिल चुका था किन्तु उसने कोई उत्तर न दिया था।

(१७)

रामशंकर जी के यहाँ विवाह की काफी चहल पहल थी। दिवाकर को देख कर सभी प्रसन्न हुये। रामशंकरजी ने हँसते हुए कहा 'मैं तो कल ही तुम्हारी रास्ता देख रहा था। देर में आये हो तो देर ही में जाने पाओगे।'

दिवाकर की आँखें शीला को खोज रही थी, यद्यपि उससे मिलते हुए उनमें कुछ लज्जा और कुछ झेंप सी मालूम पड़ रही थी। उसे शीला दिखलाई न दी।

सुरेश ने आकर कहा 'काम करने से आप जान चुराते हैं जीजा जी। अब बचने न पावेंगे।'

दिवाकर मुस्किरा कर बोला 'हाँ हाँ भाई' काम करने ही के लिए तो आया हूँ।'

सुरेश ने कहा 'विवाह-मण्डप तैयार करने का कार्य आपके सिपुर्द किया गया है' ज़रा मेहनत करनी पड़ेगी।

दिवाकर हँस कर चुप हो गया। सुरेश बोला 'पहिले जल-पान कर लीजिए।'

क्षण भर चुप रह कर दिवाकर बोला 'और सुधाकर किधर गया।

सुरेश बोला 'कदाचित शीला के साथ पड़ौस के घर में होगा बुलाता हूँ।'

दिवाकर मुँह हाथ धोने चला गया। वह समझ गया था कि शीला उससे बहुत ही नाराज होगी। उसने सोचा कि शीला

का ऐसा करना अनुचित भी नहीं है।

ज्योंही दिवाकर कमरे में आकर कुर्सी पर बैठा वैसे ही धीरे से शीला ने आकर मेज पर नाश्ते की तश्तरियाँ रख दीं। वह न दिवाकर से बोली और न नमस्ते की। दिवाकर खिसयाना सा होकर रह गया। वह चाय खाने लगा।

इतने में सुरेश सुधाकर को साथ लेकर पहुँचा। पिता को देख कर सुधाकर पास आ गया और बोला 'बाबूजी।'

दिवाकर ने स्नेह के साथ गोद में बैठा लिया और बोला 'कहाँ घूम रहे थे शैतान ?'

सुधाकर शान से बोला 'मौसी के साथ लल्लू की माँ के यहाँ से बर्तन लेने गया था। मौसी जी बड़ी अच्छी हैं बाबूजी अब मैं उन्हीं के पास रहूँगा।'

दिवाकर के एक धक्का सा लगा। वह बोला 'लखनऊ न चलोगे सुधाकर।'

सिर हिलाते हुए सुधाकर बोला 'ऊँ हूं मैं नहीं जाऊँगा जब मौसी चलेंगी तभी चलूँगा।

दिवाकर चुप होगया। शीला फिर नहीं आई।

माँ ने आकर कहा अब यहाँ काम संभालो दिवाकर। यह सब तुम्हीं को करना पड़ेगा।

'हाँ-हाँ अवश्य' दिवाकर बोला।

दिवाकर ने देखा कि घर के सभी लोग पहिले ही की तरह उससे स्नेह करते हैं। वह तो समझता था कि ये लोग उससे अवश्य अप्रसन्न होंगे शीला का प्रश्न लेकर।

किन्तु उसे जब बाणीभूषण की याद आई तो उसका दिल सा बैठने लगा। क्या शीला सुखी हो सकेगी, इस विवाह से किन्तु यह सब सोचने वाला वह कौन ? उसने तो उन्हें और शीला को एक प्रकार से धोखा ही दिया है। विद्याभूषण को

वह भली भाँति जानता था कि धन के मामले में वह कितना लालची और कंजूस है। शीला ठहरी शाह खर्च। कैसे निर्वाह होगा? और वाणी। कितना बदसूरत है वह।

दिन भर शीला उसके सामने से आती जाती रही किन्तु बोलना क्या उसने आँख उठा कर भी दिवाकर की ओर नहीं देखा। दिवाकर ने सोचा कि क्या अब शीला मुझसे कभी बोलेगी ही नहीं?

दिवाकर का भी साहस अब शीला से बोलने का न होता था। सम्भव है शीला उसका अपमान कर बैठे? कभी-कभी तो उसका जी चाहता था कि वह सब कुछ खुल कर शीला से कह दे और क्षमा माँग ले, किन्तु आगे बढ़े कैसे? और फिर इससे लाभ?

बारात आने के एक दिन पहिले उसने सुना कि आज शीला दिन भर रोई है। वह चुप रहा। करे भी तो क्या?

उस दिन रात को उसने सोचा कि अब भी इस विवाह को रोकने का कोई उपाय हो सकता है? तो फिर क्या...

'नहीं—नहीं ऐसा अब असम्भव है और कदाचित शीला भी अब इस बात को स्वीकार न करे' उसके मुंह से निकल गया।

भावुकता वश उसने जो शीला के विवाह प्रस्ताव को ठुकरा दिया था कदाचित अब उसे इस बात को लेकर पश्चात्ताप हो रहा था। वह सोचने लगा कि ऐसा करके उसने शीला के साथ ही साथ उर्मिला के साथ भी अन्याय ही किया है। किन्तु अब उपाय? उपाय कुछ नहीं। यदि शीला से वह फिर बात कर सके तो....

वह एक दम उठ कर खड़ा होगया। धीरे से शीला के कमरे की ओर चला। कमरे के पास पहुँच कर उसने समझ

लिया कि शीला अभी सोई नहीं है। कई लड़कियाँ उसके साथ चुहलबाज़ी कर रही हैं। कमरे से हंसी की आवाज़ स्पष्ट रूप से आ रही थी। वह लौट आया।

पलंग पर लेट कर वह सोचने लगा कि 'अब ऐसा होना असम्भव है। कल बारात आ जायगी और ऐसी दशा में मेरा कुछ कहना कदाचित हास्य का विषय भी बन सकता है और क्या मुंह लेकर वह बात कर सकेगा।

दूसरे दिन बारात के स्वागत की तैयारियां होने लगीं तो शीला के पिता दिवाकर से आकर बोले आप स्टेशन जाइयेगा।

क्षण भर सोच कर दिवाकर बोला 'नहीं'।

वे चले गये।

सुरेश अन्य सम्बन्धियों को लेकर बारात लेने के लिए स्टेशन चल दिया। चारों ओर चहल पहल मची हुई थी। कोई भट्टी के पास बैठा हुआ हलवाइयों से पकवान मिठाई बनवा रहा था, कोई वेदी सजाने का सामान तैयार कर रहा था और कोई दौड़-धूप कर ही केवल अपनी कार्य कुशलता की छाप जमा रहा था। गाड़ी डेढ़ बजे आती थी। जब तीन बज गया तो शीला की मा ने कहा 'गाड़ी तो आगई होगी। अभी बारात नहीं आई !'

दिवाकर बोला 'सम्भव है कि गाड़ी लेट हो और फिर सामानादि लदवाने में भी तो काफी देर लग जाती है।'

वे बैठ कर दिवाकर के लिए पान लगाने लगीं। दिवाकर ने कहा 'और आज कल तो सभी गाड़ियां लेट आ रही हैं।'

पान लगाते-लगाते वे बोलीं 'ईश्वर की कृपा से शीला के लिए लड़का बड़ा सुशील मिल गया है। देखकर तुम्हारी तबियत प्रसन्न हो जायगी।'

दिवाकर चुप रहा। वह जानता कि वाणी-भूषण कितना

सुशील और सुन्दर है। सास की बातों को सुन कर वह थोड़ा-सा मुस्करा दिया।

दिवाकर के हाथों में पान की गिलौरियां देतीं हुई वे बोलीं 'बहुतबड़े आदमी हैं। बड़ा भाई हजार रुपये तनख्वाह पाता है।'

दिवाकर मन ही मन हंसा। विद्याभूषण कितना चलता हुआ आदमी है! अच्छा रंग जमाया है।

अभी तक बारात न आई थी। दिवाकर सोचने लगा कि क्या इस गाड़ी से बारात नहीं आई! न जाने क्यों उसका हृदय इस बात को लेकर प्रसन्न होता था कि बारात नहीं आई। उसने सोचा 'यदि विद्याभूषण ने धोखा दिय तो वह अवश्य—

'बारात आगई' आकर सुरेश ने कहा।

'बारात आगई' 'बारात आगई' चारों ओर से आवाजें आने लगीं। दौड़-धूप होने लगी।

सुरेश बोला 'आप जनवासे चलेंगे जीजा जी ?

दिवाकर हंस कर बोला 'इस काम के तुम्ही मैनेजर हो। मैं चल कर क्या करूंगा ?'

सुरेश चला गया। दिवाकर एकाएक सोचने लगा कि क्या सचमुच शीला आज पराई हो जायगी ?

कदाचित दिवाकर ने यह नहीं सोचा कि इसमें दोष किसका है ?

क्या शीला का ?

(१८)

दिवाकर मण्डप सजा रहा था। लड़कियाँ कन्या को जयमाल के लिए सजा रही थीं। दिवाकर ने कई बार कनखियों से शीला की ओर देखा।

वह प्रसन्न मालूम पड़ती थी।

उसने छिपकर एक गहरी सांस ली। क्या शीला ने वाणी-भूषण को देखा है अवश्य देखा होगा क्योंकि वह एक बार दो दिन के लिए यहाँ आकर घर में महमान भी रह चुका है।

घर में स्त्रियों का समूह जमा था। बच्चों की चिल्ल-पों से कुहराम सा मचा हुआ था। बाहर निमन्त्रित जन एकत्र थे। बारात के आने में थोड़ा ही समय रह गया था। सारे घर में प्रसन्नता का साम्राज्य सा स्थापित था।

एक नवयुवती दिवाकर की सलहज लगती थी। अवसर पाकर उसने दिवाकर को छेड़ना प्रारम्भ किया।

निकट जाकर बोली 'आपको अच्छी नौकरी मिली है जीजाजी। काम पूरा हो जायगा तभी खाने को मिलेगा।'

दिवाकर हंसकर बोला 'हमारा पेट तो आपकी बातें ही सुन कर भर जाता है। आप सामने बैठी रहें तो फिर भोजन की आवश्यकता ही क्या है?'

सलहज बोली 'ऐसे कहीं किसी का पेट भरा है? सामने बैठने वाली ले आइये तभी पेट भरेगा।'

दिवाकर मुस्करा कर बोला 'तब आप आप ही साथ चली चलिए न? हम तो सब प्रकार.................

और इतने में उसके श्वसुर ने आकर कहा 'दिवाकर जरा इधर आना।'

सलहज भाग खड़ी हुई। धीरे से रामशंकर जी ने दिवाकर से कहा 'बड़ा गड़बड़ हो गया। वे लोग विवाह करने को तैयार नहीं हैं।'

आश्चर्य से चकित होकर दिवाकर ने कहा 'क्यों!'

रामशंकर जी अधिक चिन्तित से होकर बोले 'समझ में नहीं आता कुछ। उन्होंने कहलवा भेजा है कि २०००) और भेजिये तब हम आपके द्वार पर बारात लेकर आयेंगे।'

दिवाकर सन्न रह गया। क्या वास्तव में विद्याभूषण इतना नीच हो सकता है !

रामशंकर जी बोले 'समझ में नहीं आता कि क्या किया जाय ! मेरी सामर्थ तो उन्हें इतना रुपया देने की है नहीं दिवाकर।'

दिवाकर बोला 'वह तो बड़ी नीचता की बात है। यह तो उन्हें विवाह के पूर्व ही तय कर लेना चाहिये था।'

रामशंकर जी चुपचाप खड़े रहे। दिवाकर बोला 'आप उन्हें जाकर समझाइये कि इन व्यर्थ की बातों में क्या धरा है। ऐसा करना तो महान असभ्यता की बात है। वे लोग तो पढ़े लिखे आदमी हैं।'

क्षण भर चुप रह कर रामशंकर जी बोले 'मैं तो यह उचित समझता हूँ कि तुम जाकर इस विषय में उनसे बात करो। सुरेश कहता था कि लड़के का बड़ा भाई तुम्हें अच्छी तरह जानता है।'

सिर खुजलाते हुए दिवाकर बोला 'जानता तो हूँ किन्तु....'

रामशंकर बोल उठे 'इसमें किन्तु परन्तु की बात नहीं है बेटा। यह तो मेरी इज्जत का मामला है। तुम्हें जाना ही पड़ेगा। जाओ भाई दिवाकर देर मत करो।'

दिवाकर धीरे से कमरे में जाकर कपड़े पहिनने लगा।

थोड़ी देर में सारे घर मे यह समाचार फैला गया।

एक सज्जन बोले 'क्या लड़का बेचने आये हैं ?'

दूसरे ने कहा 'वे तो पढ़े लिखे हैं ऐसी बात करते हुए उन्हें लज्जा भी नहीं आती !'

एक वृद्धा बोली 'कायदे कानून से चलेंगे या बेकायदे रुपया लेंगे।'

एक सांस लेकर दिवाकर की सास ने कहा 'हमारे यहां तो

कभी ऐसी बात नहीं हुई। बेचारे दिवाकर के बाप ने तो कभी एक सुई तक के लिए जवान नहीं डाली। 'हे भगवान अब क्या होगा।'

उधर शीला को सजाने वाली लड़कियों का भी उत्साह ठंडा हो गया। शीला ने साड़ी और आभूषण उतार कर एक तरफ डाल दिये और पलंग पर लेट कर फफक फफक कर रोने लगी।

+ + + +

विद्याभूषण ने हंसकर कहा 'बाजपेयी महा कंजूस हैं दिवाकर और मैं जानता हूँ कि कंजूस से किस प्रकार रुपये वसूल करना चाहिये। तुम बेकार में अपने ससुर की हिमायत लेकर आये हो।'

दिवाकर बोला 'ऐसी बात नहीं है विद्याभूषण। वे जो कुछ कर सकते हैं कर रहे हैं। इस समय तुम्हारा ऐसा करना कुछ उचित नहीं जान पड़ता। वैसे तुम्हारी मर्जी।'

विद्याभूषण मुस्करा कर बोले 'तुम बड़े होशियार हो दिवाकर। अब मेरी समझ में आ गया कि तुमने इस लड़की से अपना विवाह क्यों नहीं किया ? बड़े उस्ताद हो। अपने लिए तो कहीं मालदार घर ढूँढ़ रक्खा होगा ?'

और किसी वक्त यदि यह बात किसी ने उससे कही होती तो दिवाकर अवश्य इसका उत्तर घूंसे से देता किन्तु परिस्थिति को देखकर बोला व्यर्थ की बात मत करो विद्याभूषण। इस समय तो तुम्हें उत्पात और टंटा नहीं खड़ा करना चाहिये सैकड़ों आमन्त्रित जन उनके द्वार पर एकत्र हैं वे क्या कहेंगे! चलो, उठो, जल्दी तैयारी करो।'

किंचित गंभीर होकर बिद्याभूषण बोले 'अच्छा तो फिर क्या देने को तैयार हैं बाजपेयीजी। कुछ देंगे भी या यों ही सूखा टालेंगें!'

दिवाकर बोला' यह बात तो उन्ही पर छोड़ देना चाहिये। जो कुछ देसकेंगे देंगे, तुम अपनी ओर से इस विवाह के समारोह को क्यों नष्ट कर रहे हो। और तुमको ईश्वर की कृपा से कमी किस बात की है।'

क्षण भर चुप रह कर बड़ी गंभीरता पूर्वक विद्याभूषण ने कहा 'देखो दिवाकर, इस मसले को मैं इतनी जल्दी नही तय कर सकता। अन्य व्यक्तियों से भी सलाह लेनी पड़ेगी। वाजपेयीजी ने जैसा धोखा हम लोगों को दिया है वह सोच कर तो वापिस ही लौट जाने की इच्छा होती है किन्तु तुम बीच में आकर पड़ गये हो इसका ख्याल तो करना ही पड़ेगा मैं आध घंटे के अन्दर ही जो कुछ तय होगा तुमसे कहलवा दूंगा।'

दिवाकर थोड़ी देर तक बैठा रहा फिर खड़ा होकर बोला 'अच्छा चलता हूँ। जहां तक हो सके जल्दी ही निर्णय करना भाई।'

विद्याभूषण ने कहा 'हाँ,—हाँ, जरा सोचने का भी समय दो भाई।'

दिवाकर लौट आया। उसने सारा हाल बता दिया। सब लोग चुप रह गये। किसी का मन अब न लगता था सभी के चेहरों पर उदासी थी।

रात्री के बारह बज चुका था किन्तु अभी तक किसी भी प्रकार की सूचना बिद्याभूषण के पास से नहीं आई। दिवाकर भी घबड़ा सा उठा। वह बार बार सोचने लगा कि 'अब करना क्या चाहिये ?'

इतने में उसकी सास ने धीरे से आकर 'अब क्या करना चाहिये बेटा ?'

दिवाकर हिम्मत करके बोला 'जैसी आपकी आज्ञा हो।

वे चुप रहीं। इस बीच में दिवाकर ने यह निर्णय कर लिया था अब यदि उसने किसी भी प्रकार काप्रस्ताव किया गया तो वह

स्वीकार कर लेगा।

रामशंकरजी आकर बोले 'मेरा तो दिमाग ही काम नहीं करता। इन लोगों को आखिर सूझा क्या है।'

दिवाकर बोला 'मैं तो जितना कह सकता था उनसे कह आया था।'

रामशंकर बोले 'न हो तो एक बार फिर चले जाओ दिवाकर। अखिर वे अब क्या फैसला करते हैं।'

दिवाकर चुपचाप खड़ा रहा। सास बोल उठीं 'बार बार जाने से होगा क्या क्यों व्यर्थ में दिवाकर को परेशान कर रहे हो।'

रामशंकर चुप हो गये। सास धीरे से दिवाकर के और निकट आकर बोली 'अब तुम्हीं इस नाव को पार लगाओ बेटा। मैंने अब तक तुमसे कुछ नहीं कहा किंतु आज परिस्थिति ही ऐसी पड़ गई है। तुम्हारे हाँ कहते ही सभी आनंद से भर जायेंगे। चलो, तैयार हो बेटा। आशा है तुम मेरी प्रार्थना.............

और इतने ही में दौड़ता हुआ सुरेश आकर हाँफता हुआ बोला 'जल्दी तैयार हो मां। बारात आ रही है।'

सभी लोग झटपट तैयार होने लगे। दिवाकर हतबुद्धि सा वहीं खड़ा रह गया। उसके सास और श्वसुर दौड़ कर तैयारी में लगे। दिवाकर थोड़ी देर तक खड़ा रहा फिर धीरे से छत पर जाकर अपने बिछे हुए पलंग पर लेट गया।

बाजों की ध्वनि सुनाई दे रही थी दूर से। नीचे से रामशंकर ने आवाज़ दी 'आओ दिवाकर, बारात आगई।'

दिवाकर चुपचाप लेटा रहा कुछ बोला नहीं।

बारात आगई। अभ्यागतों से आंगन भर गया शीला ने आकर वाणीभूषण के गले में जयमाल डाल दिया।

दिवाकर ऊपर लेटा हुआ सब कुछ सुन रहा था। उसने उसी समय जान लिया कि शीला...............

नीचे से विद्याभूषण की आवाज सुनाईदी 'अरे भाई दिवाकर, छिप कर क्यों बैठे हो। इधर तो आओ।'

दिवाकर को उससे घृणा हो गई थी, वह चुपचाप लेटा रहा।

और उसी रात शीला और वाणीभूषण संसार दृष्टि में एक हो गये।

(१९)

जिस दिन सवेरे बारात बिदा हुई उसी दिन शाम की गाड़ी से दिवाकर सुधाकर को साथ लेकर लखनऊ को चल दिया था। वह शीला को विदा करने के लिए स्टेशन भी गया था, किन्तु वहां भी शीला से उसकी कोई बातचीत नहीं हुई। जितने लोग स्टेशन पर आये थे। सभी से शीला की बातचीत हुई किन्तु दिवाकर निरास ही रहा। उसे बुरा भी लगा। उसने निश्चित कर लिया कि वह कभी शीला से मिलने न आयेगा। शीला के इस व्यवहार का उसके हृदय पर काफी धक्का लगा था। वह चाहता तो वह स्वयं जाकर उससे बात कर सकता था, किन्तु इससे उसके आत्म सम्मान को धक्का लगता था। वह इस आशा से प्लेट फार्म पर पड़ी हुई बेंच पर बैठा रहा कि शीला बिना उससे दो बात किये न जायगी किन्तु जब रेल शीला को लेकर चल दी तो उसका दिल टूट गया। शीला के इस व्यवहार का यदि उसे पता होता तो वह कदापि उसके विवाह में सम्मिलित होने बनारस न आता। अपने हृदय की व्यथा को दबाये हुए वह घर आया और असबाब बाँधने की तैयारी

करने लगा।

मास ने आकर कहा 'यह क्या ? क्या आज ही चले जाओगे बेटा।'

सूखे से मुंह से दिवाकर ने कहा 'जी हाँ। अब व्यर्थ में यहां पड़े रहने से लाभ ?'

वे बोलीं 'दो एक दिन रुक कर चले जाते। वैसे तुम्हारी मर्जी।'

दिवाकर संदूक में ताला लगाता हुआ बोला। 'यदि काम हो तो रुक जाऊं नहीं तो फिर……………

वे बोल उठीं 'घर में सन्नाटा हो गया। यदि सभी लोग चले जायंगे तो बड़ा बुरा लगेगा।'

दिवाकर बोला 'लखनऊ में कुछ काम भी है नहीं तो रुक जाता।'

क्षण भर रुक कर वे बोलीं 'लड़का तुम्हें पसंद आया दिवाकर ?'

दिवाकर इस विषय में कोई बात न करना चाहता था, किन्तु बोला 'पसंद क्यों नहीं आया।'

वे चुप रहीं। दिवाकर जूते पहिन कर बाजार चला गया।

उसी दिन शाम की गाड़ी से वह लखनऊ आ गया।

बुआजी ने पूछा 'सब राजी खुशी से हो गया।'

दिवाकर बोला 'हाँ'

सुधाकर को गोद में बिठलाते हुए बुआ बोलीं 'लड़का बड़ा दुबला है। मालूम पड़ता है नाना नानी ने इसे कुछ खिलाया पिलाया नहीं।'

दिवाकर हँसकर चुप हो गया।

इधर ज्यों ज्यों दिन बीतते गये दिवाकर का मन उचाट होता गया। धीरे धीरे उसे अनुभव होने लगा कि बिना पत्नी के

इतना बड़ा जीवन कैसे कटेगा। अब तक न जाने कितने लोग विवाह का प्रस्ताव लेकर आये थे किन्तु दिवाकर ने उन्हें हँसकर टाल दिया था। अब दिवाकर दिन प्रतिदिन अनुभव कर रहा था कि उर्मिला के मरने के बाद से आज तक जो कुछ उसने सोचा और किया वह लगभग सभी कुछ गलत रहा। शिक्षार्थी जीवन में जो उसने सुखद भावी कल्पनाएँ की थीं वे पूरी न हो सकीं। वह पढ़ा लिखा था, सुन्दर था धनवान था किन्तु फिर भी यह एक साधारण व्यक्ति की भाँति भी सुखी न हो सका। कभी-कभी वह घण्टों सोचता कि आखिर ऐसा क्यों हुआ ? इसमें किसका दोष है ? किन्तु वह कुछ समझ न पाता।

वह देखता कि उसके आस-पास बाहर भीतर और इष्ट-मित्र सभी तो सुखी हैं। दिन भर नौकरी करते हैं व्यवसाय करते हैं और शाम को लौट कर अपनी स्त्री और बच्चों से मिलकर प्रसन्न होते हैं। दिवाकर ईर्षा और क्षोभ से विरक्त हो उठता। क्या उसके भाग्य में यह साधारण सा भी सुख नहीं है। सभी की पत्नियाँ सुन्दर नहीं हैं, पढ़ी लिखी एवं स्वस्थ नहीं हैं किन्तु वे सुखी हैं। दिवाकर के पड़ोस में मुंशी रामलाल रहते थे। उनका बड़ा सा परिवार था और वेतन था, केवल १००) मासिक। दिवाकर देखता कि उनके घर में दिन भर चहल पहल मची रहती। कितने सुखी हैं ये लोग ? रामलाल की पत्नी साधारण शक्ल सूरत की निरक्षर थी किन्तु वह देखता कि वे रोज सवेरे उसे लेकर टहलने जाते, महीने में एकाध बार सिनेमा साथ-साथ जाते और सुखी रहते। दिवाकर को यह सब असह्य था। उसकी अभी उम्र ही क्या थी। फिर किसने उसे वंचित किया इन सब सुखों से। वह तड़फ उठता उसके मुँह से निकल पड़ता 'इस प्रकार जीवन बर्बाद न कर सकूँगा। नहीं, नहीं, हर्गिज

नहीं ।'

किन्तु वह करे क्या ? उसने सोचा कि एक बार रमा के लिए वह फिर रामनारायण से क्यों न बात करे ? राजी तो वे हो ही जायँगे । किन्तु शीला अवश्य सोचेगी कि इसीलिए इन्होंने मुझसे विवाह नहीं किया, किन्तु.......सोचा करे इससे मुझको क्या ? शीला ही ने विवाह क्यों किया ? उसने तो मुझसे कई बार कहा था कि वह किसी दशा में विवाह न करेगी । तब ? और फिर मुझे इन सब बातों से क्या ? मैं अपना जीवन इन कोरी भावुकता की बातों में पड़कर नष्ट क्यों करूं ? मैं इतना व्यथित हूँ, इतना दुःखी हूँ किन्तु कौन मुझसे पूछने आता है कि तुम्हारा क्या हाल है ? और—

वह उठकर बैठ गया और बोला 'मैं अवश्य रमा से विवाह करूंगा चाहे रामनारायण के सामने मेरा सिर ही क्यों न झुक जाय । मैंने उन्हें धोखा दिया है उसका प्रायश्चित भी हो जायगा । अवश्य और अभी................'

इस समय संध्या थी । वह कपड़े पहिन कर रामनारायण के घर की ओर चल दिया । उनके घर के पास पहुँच कर वह एक बार झिझका किन्तु फिर साहस करके बैठक में पहुँच ही गया ।

रामनारायण आरामकुर्सी पर बैठे हुए कुछ सोच रहे थे । एकाएक दिवाकर को इतने दिन बाद घर में देख कर उन्हें कुछ आश्चर्य हुआ । बोले 'आओ दिवाकर ।'

दिवाकर चुपचाप सामने की कुर्सी पर बैठ गया दोनों ही काफी देर तक चुप बैठे रहे ।

अन्त में दिवाकर का मुंह खुला 'मैं इस योग्य तो नहीं हूँ कि तुम्हें अपना मुंह दिखलाऊं किन्तु यह साहस करके चला आया कि कदाचित् अब तुमने मुझे क्षमा कर दिया होगा ।'

सिर हिलाते हुए रामनारायण ने कहा 'अब उस पुरानी बात को उठाने से कोई लाभ नहीं दिवाकर। उस बात से मुझे कष्ट ही होता है।'

दिवाकर चुप रहा। रामनारायण कहते गये 'संसार में सभी कुछ अनुभव ही से जाना जाता है। मैंने कभी कल्पना भी न की थी तुम्हारे जैसे मित्र से भी धोखा हो सकता है। खैर, दूर करो इन बातों को।

थोड़ी देर बाद दिवाकर बोला 'तो क्या मैं अपनी उस गलती का प्रायश्चित कर सकता हूं ?'

रामनारायण कुछ समझे नहीं। बोले 'जब तुमने अपनी गलती को मान लिया तो समझ लो कि प्रायश्चित ही कर लिया। मेरे हृदय में अब तुम्हारे प्रति किसी प्रकार का मैल नहीं रहा।'

दिवाकर सोच रहा था कि वह किस प्रकार अपनी बात स्पष्ट करे। रामनारायण जी बोल उठे 'शीला को ले आये क्या ?'

दिवाकर आश्चर्य के साथ बोला 'मैं क्यों ले आता ? वह तो अपनी ससुराल गई।'

"ऐं', तो क्या तुमने विवाह नहीं किया ? 'कुछ आश्चर्य के साथ रामनारायण बोले।'

क्षण भर चुप रह कर दिवाकर ने कहा नहीं। उसका विवाह तो दिल्ली में विद्याभूषण के छोटे भाई के साथ हो गया।

कुछ चौंक कर रामनारायण बोल उठे 'क्या वाणीभूषण के साथ ? उस बदमाश और आवारा के साथ।'

दिवाकर रामनारायण के मुँह की ओर देख कर बोला 'हाँ।'

रामनारायण क्षण भर तक चुप रह कर बोले 'यह तुमने बहुत

बुरी खबर सुनाई दिवाकर । वाणीभूषण तो महान दुश्चरित्र तथा पियक्कड़ लड़का है। तुम्हें शायद नहीं मालूम कि रमा का विवाह भी लगभग उससे ठीक हो गया था । ईश्वर की कृपा से मुझे ठीक समय पर सब कुछ मालूम हो गया । रमा की तो हत्या ही हो जाती ।

दिवाकर का मुँह सूख गया । वह बोला 'शीला का दुर्भाग्य ही इसे कह सकता हूँ ।'

रामनारायण चुप हो गये । काफी देर बाद दिवाकर चलने को उठ खड़ा हुआ । वह लाख चेष्टा करने पर भी अपनी बात न कह सका । उसने सोचा फिर कभी मिलूंगा ।

दरवाजे के पास पहुँचते पहुँचते उसके मुँह से निकल ही गया 'रमा का विवाह भी ठीक हुआ या नहीं ?'

रामनारायण बोले 'तुम्हें यह सुनकर प्रसन्नता होगी दिवाकर कि रमा के लिए बहुत ही अच्छा एक लड़का प्रयाग में मिल गया है । अगली २५ नवम्बर का विवाह तय हुआ है ।'

दिवाकर का जी सा बैठने लगा । वह चुपचाप घर चला आया ।

(२०)

शीला को दिल्ली गये लगभग महीना भर हो गया था किंतु दिवाकर के पास अभी तक उसका कोई पत्र न आया था । दिवाकर ने भी उसे अब तक पत्र लिखने का साहस न किया था ।

एकाएक शम्भू ने आकर उसे एक पार्सल दिया और बोला 'फार्म पर दस्तखत कर दीजिये भाई साहब । आपके नाम दिल्ली से यह पार्सल आया है ।'

पार्सल शीला ने भेजा था ? दिवाकर समझ गया कि इसमें सुधाकर के लिये कपड़े इत्यादि होंगे। उसे आश्चर्य हुआ कि पार्सल का १०००) का बीमा किया हुआ था।

दिवाकर ने जब पार्सल खोला तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ यह देखकर कि उसमें वे ही वस्तुएं थीं जो उसने शीला को विवाह के समय उपहार में दी थीं—साड़ी, आभूषण तथा रुपये।

साड़ी की तह में एक पत्र भी मिला। शीला ने उसमें लिखा था:—

प्रिय जीजा जी,

पत्रोत्तर में देर हुई क्षमा करें। यदि मैं यह लिख दूँ कि कदाचित भविष्य में आपको पत्र ही न लिख सकूँ तो आशा है आप क्षमा करेंगे। क्या करूं कुछ परिस्थिति ही ऐसी है नहीं तो क्या आप मुझसे ऐसी आशा कर सकते थे ?

आपके दिए हुए उपहार वापिस भेज रही हूँ आशा है आप दुःखी न होंगे। जब आपका सब कुछ मेरा होते हुए भी मेरा नहीं हुआ तो इन उपहारों को लेकर मेरे हृदय पर कितनी चोट लगेगी इसका अनुमान आप नहीं कर सकते। जो कुछ भी हो मैंने इन्हें लौटा देने का ही निर्णय किया है।

आपका कष्ट मैं समझ रही हूँ। आप आजकल जिस अवस्था में होंगे इसका भी अनुमान मैं लगा रही हूँ, किन्तु आप ही बतलायें कि मैं इस विषय में कर ही क्या सकती हूँ। मैं आपके प्रति हार्दिक सहानुभूति रखते हुए भी क्या पूछ सकती हूँ कि आखिर इस दोष का उत्तरदायित्व किस पर है ? अस्तु

मैं यहाँ सुखी हूँ या कष्ट में यह लिखकर आपके कष्टों को बढ़ाना नहीं चाहती। आप यह समझ लें कि अब शीला इस संसार में नहीं है।

मेरा बनारस जाना निश्चित नहीं है। सम्भव है कभी भी न जाऊँ, किन्तु इतनी प्रार्थना है कि यदि जीवन में कभी बनारस जा सकूं तो सुधाकर को अवश्य वहाँ भेज दीजिएगा, क्योंकि वह मेरी स्वर्गीया जीजी का स्मृति-चिन्ह है।

एक और अनुरोध है। आप कभी मुझे पत्र लिखने का कष्ट न करें, यदि आपने ऐसा किया तो मेरे कष्टों की वृद्धि ही करेंगे।

आपकी—
शीला

दिवाकर पत्र पढ़कर भौंचक्का सा रह गया। उसने कई बार पत्र पढ़ा किन्तु जैसे कुछ समझ ही में न आया। शीला बनारस क्यों न जायगी क्या विद्याभूषण ने फिर कोई कमीनापन दिखलाया है ? कदाचित बनारस से कुछ समाचार मिले। इस पत्र के पढ़ने से तो पता चलता है कि शीला काफी कष्ट में है। फिर मैं क्या करूं ? पत्र भी तो नहीं लिख सकता। क्यों ? क्या वाणीभूषण ने मना कर दिया है शीला को ?

उसके चित्त में आया कि वह अभी दिल्ली चल दे और विद्याभूषण को एक करारी फटकार बतलाए जाकर। किन्तु वह चुप रह गया। इधर शीला के प्रति उसके हृदय में जो कटु भाव थे वे सहानुभूति में परिणित होगये। शीला को घोर कष्ट है किन्तु इसका उत्तरदायित्व—

उसका मस्तिष्क घूम रहा था वह जितना हृदय हलका करना चाहता था उतनी ही वेदना बढ़ती ही जाती थी। क्या विद्या और वाणी वास्तव में पिशाच हैं। विद्याभूषण तो पहले इतना पतित न था। फिर अब क्या हो गया उसे ? किन्तु मैं क्या करूं, क्यों करूं, लेकिन....

वह विकल होकर पलंग पर लेट गया। बड़ी देर बाद

बुआ जी ने आकर कहा 'भोजन करलो चल कर बेटा। आज तो तुमने चाय भी नहीं पी।'

लेटे ही लेटे दिवाकर बोला 'आज इच्छा नहीं है बुआजी भोजन करने की। कुछ जी भारी सा है।'

बुआजी इधर दिवाकर से बहुत स्नेह करने लगी थीं, बोलीं 'तू तो जान बूझ कर अपना जी दुखी कर रहा है दिवाकर। मैं अब तेरी एक न सुनूंगी। कल ही से एक सुन्दर सी बहू की तलाश करूंगी। यह भी तेरी कोई बात है? कष्ट सहता है और कहता कुछ भी नहीं।'

दिवाकर हँस कर बोला 'मुझे कष्ट है यह तुम्हें कैसे मालूम हुआ बुआजी? मुझे तो कोई कष्ट नहीं है।'

बुआजी बोलीं 'बस अब रहने दे। मुझे तेरी बात नहीं सुनना है। जो जी में आएगा करूँगी। अच्छा, थोड़ा सा भोजन ले आऊं? थोड़ा सा खा ले दिवाकर, तुझे मेरी कसम।

बुआ का स्नेह दिवाकर समझता था, बोला 'अच्छा ले आओ थोड़ा सा भोजन।'

खाते खाते दिवाकर बोला 'शम्भू से कहो कि वह एक दूकान तलाश करे। मैं शायद इधर दो तीन दिन के लिए बनारस जाऊंगा। वहाँ से लौट कर शम्भू को दूकान खुलवा दूंगा।'

बुआ प्रसन्न होकर बोलीं 'दूकान की जल्दी क्या है? पहिले तू अपना चित्त ठीक करले फिर देखा जायगा। सुधाकर की मौसी क्या बनारस आगई?'

सहसा दिवाकर का खिला हुआ चेहरा मुरझा गया। बोला 'अभी शायद नहीं आई।'

बुआ बोल उठीं 'यह कैसी बात? महीने भर से ज्यादा होगया और अभी तक उन्होंने लड़की को विदा नहीं किया?'

दिवाकर चुप रहा। लगभग १० बज गया था अतएव सोने

के लिए दिवाकर बिस्तरे पर चला गया।

अभी १० मिनट भी न हुए थे कि सुधाकर खुशी से कूदता हुआ आकर बोला 'नानाजी आये हैं बाबूजी। नानाजी आए हैं मैं बनारस जरूर जाऊँगा बाबूजी उनके साथ।'

दिवाकर अभी उठ कर बैठने भी न पाया था कि रामशंकर जी कमरे में आगए। दिवाकर ने पूछा 'आपने अपने आने की सूचना भी न दी बाबूजी।'

पलंग पर बैठते हुए रामशंकर बोला 'क्या करूं' एकाएक चल पड़ा बनारस से। तुम्हें तो दिल्ली का कुछ हाल मालूम न हुआ होगा ?'

धड़कते हुए दिल से दिवाकर ने कहा 'क्या हुआ ?'

रामशंकर जी कई मिनट तक चुप रहे। दिवाकर उनके चेहरे पर विषाद और चिन्ता की स्पष्ट छाया देख रहा था।

ज़रा सावधान होकर रामशंकर ने कहा 'शीला की तो तक़दीर ही फूट गई। वाणीभूषण तो इतना आवारा निकला कि उसकी हरकतें सुनकर रोयें खड़े, हो जाते हैं। शीला को वहाँ इतना कष्ट है कि····

रामशंकर का गला भर आया। दिवाकर बोला 'क्या शीला को बनारस नहीं भेजना चाहते।'

रामशंकर ने कहा 'मैंने कई बार उन्हें इस विषय में लिखा पहिले तो उन्होंने दो पत्रों का उत्तर ही नहीं दिया। बाद में उन्होंने लिखा कि आपकी लड़की हमारे किसी काम की नहीं है आप जब चाहें उसे हमेशा के लिए लेजा सकते हैं।'

'हे' आश्चर्य के साथ दिवाकर ने कहा:

रामशंकर जी कहते गये उसके बाद शीला का पत्र मिला। उसमें उसने लिखा था कि उसके पति नाम के लिए तो होस्टल में रहते हैं किन्तु शराब और वैश्यागमन का उन्हें विशेषरूप से

व्यसन है।'

दिवाकर हैरत में आगया। उसे रामनारायण के द्वारा कही हुई बात सच मालूम पड़ने लगी।

रामशंकर ने कहा 'वह दुष्ट शीला को नशे में पीट भी देता है और साथ ही साथ इन अत्याचारों में विद्याभूषण और उनकी पत्नी का भी काफी हाथ रहता है।'

कुछ सोचकर दिवाकर ने कहा 'तो अब करना क्या चाहिये ?'

रामशंकर ने कहा 'मैं दिल्ली जारहा हूँ। मैंने सोचा साथ में तुम्हें भी लेता चलूं। तुम अब जानते हो दिवाकर कि अब मुझ में ज्यादा बरदाश्त करने की शक्ति नहीं रह गई है। तुम्ही जो ठीक समझो सो करो।'

कुछ देर चुप रहकर दिवाकर बोला 'जैसी आपकी आज्ञा। मुझे चलने से इन्कार नहीं है।'

रामशंकर ने कहा 'मैं चाहता हूँ कि शीला को हम लोग साथ लिवा लायें और तब तक इन लोगों का व्यवहार ठीक न हो तब तक उसे बनारस में रक्खें। इसके अतिरिक्त और कर ही क्या सकते हैं।'

दिवाकर चुप रह गया।

(२१)

विद्याभूषण ने कहा 'तो क्या वाणी का दुबारा ब्याह नहीं कर सकता ? ऐसी लड़की को रख कर हम क्या करेंगे ?'

छाया मटक कर बोली 'मुझे तो उसकी सूरत फूटी आँख नहीं अच्छी लगती। भवानी में न रूप रंग ही और न गुण। उस पर अपने को मेम की बच्ची से कम नहीं समझती।'

विद्याभूषण ने कहा 'रोज चिट्ठी पर चिट्ठी बनारस से चली आती हैं कि भेज दो। इसे तो दिवाकर से मिलने की जल्दी पड़ी है। वही तो इसका यार है। उस दिन उसके संदूक से वाणी ने जबरदस्ती दिवाकर की फोटो निकाल कर फाड़ डाली। चाहिये तो यह था कि शर्म से कट जाती मगर उस पर तुर्रा यह कि उस दिन उसने सारे दिन भोजन नहीं किया और आँसू बहाती रही।'

छाया मुस्किरा कर बोली 'आखिर है तुम्हारा ही दोस्त। बड़ा मन चला है' एक दिन तो वह····

कहते-कहते छाया लज्जा की मुद्रा बनाकर चुप होगई। विद्याभूषण बोला 'हाँ-हाँ कहो, चुप क्यों हो गई'। क्या हजरत ने तुम्हारे साथ भी कोई हरकत करने की कोशिश की। छिपाती क्यों हो ?'

छाया मुंह बनाकर बोली 'हाँ, डोरे तो मुझ पर भी डालने की कोशिश की, किन्तु मैंने वह फटकार बतलाई कि अपना सा मुंह लेकर रह गये। उन्हें मालूम नहीं कि मैं किस तरह की औरत हूँ ?'

विद्याभूषण चेहरे पर ताव लाकर बोले 'अच्छा ये बात थी ? तुमने मुझको क्यों नहीं बतलाया ?'

छाया बोली 'उनके छक्के छुडाने के लिए मैं ही काफी थी। यह जरासी बात मैं तुमसे क्या कहती।'

विद्याभूषण सिर हिलाकर चुप रह गये। छाया बोली 'और शीला तो जहर की बुझाई हुई है। अगर मेरे पल्ले पड़ी रही तो दस दिन में ठीक करदूं। वाणी बेचारा तो सीधा सादा है, यह उसके मन की ही नहीं है अभी कल ही मैंने जाकर महारानी को बचा दिया नहीं तो वाणी हड्डी तोड़कर रख देता। बराबर कतरनी ऐसी जबान चलती रही।'

विद्याभूषण ने कहा 'इसको बनारस ही भेज देना ठीक है। वहीं जाकर मरै खपै।'

छाया यह बात पसन्द न करती थी। वह तो शीला के कष्ट ही से प्रसन्न होती थी। यदि वह बनारस चली गई तो अब घर का काम कौन करेगा। बोली 'अरे यह सब ठीक हो जायगी। इसे बनारस भेज देने से तो यह और भी नाक कटायेगी।'

क्षण भर चुप रह कर विद्याभूषण बोले 'मगर दिवाकर को मैं बहुत ही ऊंचे ढंग का आदमी समझता था। अगर मैं यह जानता कि वह इतना बड़ा लोफर है तो क्या इतने दिन अपने घर में टिकने देता ? खैर, अब कभी मुलाकात हुई तो ऐसा पटकूंगा कि छटी का दूध याद आ जायगा। आयें तो इधर एक दिन.......

और दिवाकर ने नीचे से आवाज दी 'विद्याभूषण !'

छाया चौंककर बोली 'कोई पुकार रहा है।'

विद्याभूषण यह कहते हुए दरवाजा खोलने चले कि 'इतनी रात को अब कौन आयाहै।'

दरवाजा खोलने पर सामने दिवाकर और रामशंकर को खड़े देखकर वह चुप रह गया। दिवाकर ने हँसते हुए कहा 'देख क्या रहे हो ? मैं दिवाकर हूँ, क्या घर में अन्दर आने की आज्ञा नहीं है ?'

सिटपिटा कर विद्याभूषण बोला 'नहीं-नहीं, हाँ अन्दर चलो दिवाकर--आप लोग !'

इस समय रात्रि के लगभग १२ बज चुके थे। अन्दर आकर दिवाकर ने 'कहा इस समय हम लोग काफी थके हुए हैं और रात भी काफी जा चुकी है अतएव सबेरे बात करेंगे विद्याभूषण। इस समय हम लोगों को सोने के लिए स्थान चाहिए बस।

विद्याभूषण ने कहा 'और भोजन ?'

दिवाकर बोल उठा 'उसकी आवश्यकता नहीं है।'

सवेरे जब चाय आदि से निवृत्त होकर दिवाकर विद्याभूषण के पास एकान्त में आया तो बोला 'यह सब क्या मामला है विद्याभूषण। तुम लोगों से तो ऐसी आशा न थी मुझको ?'

विद्याभूषण ने कहा 'मगर इसमें हम लोगों का कोई दोष नहीं है दिवाकर।'

दिवाकर ने व्यंग का भाव दिखलाते हुए कहा 'तो फिर इसमें सारा दोष शीला ही का है क्या ?'

विद्याभूषण कुछ सिटपिटा सा गया। बोला ऐसी बात नहीं है दिवाकर—मगर अधिकाँशतय: तो इसमे शीला ही का दोष कहा जायगा।'

दिवाकर आवश्यकता से अधिक गंभीर होकर बोला 'देखो विद्याभूषण, इन सब बातों से काम नहीं चलेगा। बड़े होने के नाते इसका सारा उत्तरदायित्व तुम्हारे ही ऊपर आता है। मैं तुम्हें लड़कपन से जानता हूँ, और मुझे विश्वास है कि न तो तुम्हारे द्वारा कभी इतना अप्रिय कार्य हो सकता है और न तुम्हारा इसमें किसी प्रकार का सहयोग ही हो सकता है। मैं इसलिए तत्व की बात जानना चाहता हूँ।'

अपनी प्रसंसा सुनकर विद्याभूषण कुछ गद्-गद् हो गया, बोला 'हम एक दूसरे को अच्छी तरह समझते हैं दिवाकर। तुम्हें मालूम है कि मैं दुनियाँ भर के झंझटों में नहीं पड़ता। अच्छा हो यदि तुम वाणी से ही इस संबन्ध में बात कर लो।'

कुछ सोचकर दिवाकर ने कहा 'अच्छी बात है। वे कब आयेंगे ?'

विद्याभूषण ने कहा 'मैंने उससे कहलवा दिया है। कदाचित वह शाम तक आ जायगा।'

दिवाकर चुप हो गया। विद्याभूषण ने कहा 'मैं स्वयँ चाहता हूँ कि मामला तय कर दिया जाय। रोज रोज का लड़ाई झगड़ा मुझे भी पसंद नहीं है।'

क्षण भर चुप रह कर दिवाकर ने कहा तुम जानते हो विद्याभूषण कि मैं साधारण व्यक्ति नहीं हूं। न्याय के सामने अपना सिर झुका सकता हूँ किन्तु अन्यायी को मैं साधारण छोड़ भी नही सकता। मुझे आश्चर्य है कि शीला ने अपने ऊपर इतना अन्याय सहन कैसे कर लिया। वह तो शिक्षिता लड़की है उसे तो डट कर मुकाबिला करना चाहिये था।'

दिवाकर की दृढ़ता देखकर विद्याभूषण का दिल काँप उठा। वह बोला 'ऐसी बात नहीं है दिवाकर। हम तुम कोई गैर थोड़े ही हैं। सब कुछ निपट जायगा और वाणी भी तो अभी जरा ना समझ लड़का है।"

दिवाकर ने कहा 'मैं अभी शीला से मिल कर बात करूंगा और उसके बाद ही किसी निर्णय पर पहुँच सकता हूं।"

विद्याभूषण ने कहा 'हाँ-हाँ, मैं उसे अभी भेजता हूँ।

कह कर वे अन्दर चले गये। थोड़ी देर बाद धीरे से शीला आकर दिवाकर के पास कुर्सी पर बैठ गई।

यह क्या ! क्या यह शीला है ?

दिवाकर ने देखा कि इधर महीने डेढ़ महीने के अन्दर ही शीला शीला नहीं रही। दुबली, पतली, गाल बैठे हुए, रंग मलीन, आँखें सूजी सी हुई और चेहरे की कान्ति गायब। दिवाकर के हृदय पर गहरा धक्का लगा। ओफ ! किसका दोष है यह ?'

वह धीरे से मुस्कराने की चेष्टा करता हुआ बोला 'कहिये शीलाजी।

शीला एक दम से फूट कर रो पड़ी। दिवाकर मौन बैठा

उसका रोना देखता रहा। रोने का वेग कम होने पर वह बोली 'आप लोग मुझे इस प्रकार भूल जायेंगे यह मुझे न मालूम था।

और वह फिर रो पड़ी। धीरे से दिवाकर बोले 'मैं इस विषय में कुछ न जानता था शीला। मनुष्य भी इतने बड़े पशु हो सकते हैं यह मैंने कभी नहीं जाना।"

शीला ने कहा 'बाबूजी'......................

दिवाकर बोल उठा 'वे कहीं अपने किसी मित्र से मिलने चले गये हैं। घबड़ाने की बात नहीं है, हम लोग तुम्हें ले जाने के लिए ही आये हैं।"

शीला चुप रही। दिवाकर उससे सब कुछ पूछने आया था किन्तु शीला का कष्ट देखकर उसे बात करने का साहस न हुआ। वह चुपचाप बैठा रहा।

शीला बोली 'मैं तो समझ चुकी थी कि अब जीवित इस घर से जाना कठिन है। अपने ऊपर किए गये अत्याचारों की कथा कह कर मैं आप लोगों को दुःखी नहीं करना चाहती।'

दिवाकर चुप रहा। शीला ने कहा 'किन्तु आप लोगों से मेरी प्रार्थना है कि ताव में आकर किसी प्रकार का झगड़ा बखेड़ा न करें। जहाँ तक होसके राजी खुशी के साथ मुझे ले जाने की चेष्टा करें।'

सूखी हँसी हँस कर दिवाकर बोला 'हम लोग यहाँ लड़ने भिड़ने थोड़े ही आये हैं। हाँ, अगर सीधी अगुली घी न निकला तो साम, दाम, दण्ड भेद से भी काम लेना मैं जानता हूँ।'

शीला चुप रही। दिवाकर बोला अच्छा तुम जाओ शीला। शाम को सब कुछ तय होगा।'

क्षण भर चुप रह कर शीला बोली 'लेकिन एक प्रार्थना है आपसे। यदि आप लोग मुझे इस बार यहाँ से न ले जा सके तो फिर मुझे जीवित.........

वह फिर रो पड़ी। दुःखी हृदय से दिवाकर ने कहा 'तुम चिन्ता न करो शीला। संसार की कोई भी शक्ति तुम्हें यहाँ से ले जाने में मुझे रोक न सकेगी।'

दिवाकर बाहर आ गया।'

(१५)

वाणीभूषण को मदिरा-- सेवन का बुरा चसक पड़ गया था। यह आदत उसने होस्टल में रहकर अपने सहपाठियों से सीखी थी। उसका एक साथी था। बनवारीलाल नगर के पिता सबसे बड़े सेठ लाला मुरारीलाल का वह एकलौता बेटा था। पिता की ओर से उसे अपरिमिति धन खर्च करने के लिये मिलता था। शराब, जुआ तथा वेश्यागमन का उसे व्यसन था। वाणी उसका एक मात्र मित्र था। उसके साथ ऐयाशी भी करता था और रुपया भी खींचता था। विद्याभूषण धन के क्रीत दास थे अतएव इतने बड़े सेठ के बेटे को वाणी का मित्र देखकर वे फूले न समाते। वाणी को शराब के नशे में देखकर भी वे उससे कुछ न कहते। इसका फल यह हुआ कि बड़े भाईका उसे बिल्कुल ही भय न रह गया। छाया भी देवर को अपने जाल में फाँस कर खूब रुपये वसूल करती थी। कहने का तात्पर्य यह है कि दो वर्ष के अंदर ही वाणी पतन की चरम सीमा पर पहुँच गया।

शीला के घर में आते ही छाया ने अनुभव किया कि अब वाणी उसके हाथ से निकल जायेगा। उसने यह भी देखा कि वाणी शीला की ओर आकर्षित है। शीला के आते ही उसने मदिरा—सेवन भी बंद कर रक्खा था।

किन्तु छाया को सहन न हुआ। उसने धीरे धीरे शीला

की बुराई करना प्रारम्भ करदी। उसने वाणी के दिल में यह बात बैठा दी कि शीला का दिवाकर से प्रेम है और इसे सिद्ध भी कर दिया।

वाणी के लिए एक तो मदिरा—सेवन छोड़ना वैसे ही दुष्कर था फिर उस पर हो उठा शीला के चरित्र पर सन्देह। एक दिन वह खूब शराब पीकर आया, शीला को मारा पीटा और गालियाँ दीं तथा छाया के कमरे में जाकर सो रहा।

छाया अपनी कुशलता पर मुसका दी।

अब उसका यही नियम बन गया। दो चार दिन में जब कभी वह घर आता तो शीला से इसी प्रकार का व्यवहार करता। एक दिन उसने शीला के संदूक में दिवाकर की फोटो देख ली। बस, पीट पाट कर शीला को ठीक कर दिया तथा फोटो के टुकड़े-टुकड़े करके फेंक दिया। उसने शीला को कहीं भी पत्र लिखने की मनाही करदी। जब कभी बनारस जाने का नाम लेती तभी छाया उससे कह देती कि वह दिवाकर से मिलने जाना चाहती है। बस, वह इसी कारण बनारस न जा सकी।

शीला जब अत्याचार सहन करते करते ऊब गई तो उसने चुपके से बनारस को सारा हाल लिखकर भेज दिया।

लगभग १० बज चुका था किन्तु अभी तक वाणीभूषण के दर्शन न हुए थे। दिवाकर ने सोचा 'इस प्रकार कब तक यहाँ पड़े रहना पड़ेगा।

रामशंकर बोले 'न हो तो हम लोग कल होस्टल ही में चल कर उससे मिल लें।"

दिवाकर को थोड़ी देर में नींद आ गई। वह खुर्राटे लेने लगा। रामशंकरजी भी सो गये

अचानक किसी ने आकर दिवाकर को जगाया। वह भड़-

भड़ा कर उठ बैठा। सामने शीला खड़ी थी।

दिवाकर ने कहा 'आज तो वह आया ही नहीं। क्या करूं शीला।'

शीला क्षण भर चुप रह कर धीरे से बोली 'आ गये।'

दिवाकर खड़ा होकर बोला 'कहाँ है ? क्या तुम्हारे कमरे मे ?"

शीला चुपचाप खड़ी रही। दिवाकर ने फिर पूछा 'क्या चले गये ?'

शीला का मुंह खुला 'नहीं,। अपनी भाभी के कमरे मे है।

दिवाकर कुछ सोचकर बोला 'फिर क्या करू ?'

शीला बोली 'आप चाहें तो मिल सकते हैं। अभी आये हैं।'

दिवाकर शीला के साथ छाया के कमरे की ओर चला। शीला अपने कमरे में चली गई।

दिवाकर ने छाया के कमरे के पास पहुँच कर धीरे से किवाण खटखटाया।

अन्दर से छाया ने कहा 'कौन ?'

दिवाकर ने फिर दरवाजा खटखटाया। 'बोला नही।'

छाया ने किवाड़ खोल दिये। सामने दिवाकर को देखकर मुस्किरा कर बोली 'कौन ? दिवाकर बाबू ?'

दिवाकर को उस पर घृणा आरही थी किन्तु बोला 'हाँ, मै दिवाकर। जरा वाणी बाबू से मिलना चाहता हूँ।'

क्षण भर रुक कर छाया बोली 'अच्छा अन्दर आइये।'

वाणी अभी सोया नहीं था। सामने पड़ी हुई कुर्सी पर आँख फाड़े बैठा हुआ था। दिवाकर को देखकर लड़खड़ा कर उठ बैठा और बोला 'तू– तू—कौन।'

दिवाकर उसकी अवस्था समझ गया था। दृढ़ता के साथ बोला 'मैं हूँ दिवाकर।'

वाणी की त्यौरियों पर बल पड़ गये। नशे की तेजी में वह ठीक से बोल न पाता था। दिवाकर के नजदीक आकर लाल लाल आँखें दिखाता हुआ बोला 'तू—तू--दिवाकर--तू—यहाँ हाँ—क्यों—क्यों—आया·······

दिवाकर स्फुट—स्वर से बोला 'ठीक बात करो नहीं तो दो मिनिट में सारा नशा हिरन कर दूंगा।'

वाणी बिगड़ कर बोला 'तू—तू--कैसे--से--इस--घररर-में--ऐं—घुसा – साले'···

'तड़, स दिवाकर ने उसके गाल पर एक थप्पड़ दिया और ओठ चबाकर बोला हड्डियां तोड़कर रख दूँगा जो जबान से गाली निकाली। मैं दिवाकर हूं यह तू अच्छी तरह से समझ ले।

थप्पड़ जोर का था। अपना गाल सहलाते हुए वह बोला माड्–डालूँगा साले···

दिवाकर ने उसके दोनों हाथ पकड़ लिये और 'तड़ातड़' चांटे लगाना शुरू किये। छाया भाग खड़ी हुई। मार खाकर वाणी चिल्लाने लगा 'माड्—डाला—माड्–डाला—

विद्याभूषण और छाया दौड़ कर आगए। वाणीभूषण जमीन पर पड़ा हुआ 'हाय, हाय,' चिल्ला रहा था तथा दिवाकर क्रोध से हाँपता हुआ कह रहा था 'नीच, कमीने, नराधम, अपनी और तेरी जान एक कर दूँगा।'

विद्याभूषण चेहरा गम्भीर बनाकर बोले 'यह बात तो ठीक नहीं है दिवाकर।'

दिवाकर क्रोध से जल रहा था, बोला 'मिट्टी में मिला दूँगा तुम्हारे सारे घर को विद्याभूषण। तुमने समझ क्या रक्खा है सवेरा होते ही सारे घर को अगर हथकड़ी न पहिनवा दूँ तो दिवाकर नाम नहीं।'

विद्याभूषण दिवाकर की शक्ति जानता था। वह जानता

था कि दिल्ली के कोतवाल दिवाकर के घनिष्ट मित्रों में से हैं ज़रा देर चुप रह कर बोला। 'मारपीट करने की अपेक्षा मामला आपस में सुलझा लेना ज्यादा अच्छा है।'

पीछे खड़े हुए रामशंकर ने कहा 'लड़की पर हाथ उठाते समय तुम लोगों को ये बातें न सूझी थीं। आओ दिवाकर इसे आज अच्छा सबक दे दिया गया है। कल अगर मामला न सुलझा तो समझ लिया जायगा।'

दिवाकर चुपचाप कमरे के बाहर आगया। रामशंकर जी भी उसी के साथ अपने कमरे में आगए।

दिवाकर ने चारपाई पर लेटते हुए कहा 'इन सालों के साथ सख्ती ही करनी पड़ेगी। सीधी अंगुली घी न निकलेगा। कहो तो अभी जाकर बाबू ताराचन्द (दिल्ली के कोतवाल को) जगाऊं ?'

रामशंकर जी बोले 'सबेरे तक ठहरो दिवाकर। रात के वक्त व्यर्थ का हंगामा खड़ा हो जायगा।'

दिवाकर चुप रहा। अब उसका क्रोध धीरे धीरे ठण्डा हो रहा था।

थोड़ी देर में धीरे से विद्याभूषण आकर दिवाकर के पास बैठ गये।

दिवाकर चुप रहा। थोड़ी देर बाद विद्याभूषण ने कहा 'देखो दिवाकर, व्यर्थ का हो हल्ला मचा कर मैं अपनी और तुम्हारी बदनामी नहीं करना चाहता। हम दोनों एक दूसरे को भली भाँति जानते हैं, अतएव हम लोगों को परस्पर प्रेम-भाव से सब मामला निपटा देना चाहिए।'

दिवाकर बोला 'मुझे सब से बड़ा क्षोभ इसी बात का है कि मेरे इतने निकट होते हुए भी तुमने शीला पर इस प्रकार अत्याचार होने दिया विद्याभूषण। तुम्हें शर्म आना चाहिए। ये क्या

सभ्यों की सी बातें हैं ?'

विद्याभूषण बोले 'यह तो पति-पत्नी का परस्पर का मामला है। इसका दोष तुम मुझ पर क्यों रख रहे हो दिवाकर।'

दिवाकर बोल उठा 'तो अच्छी बात है। यदि शीला के पति से तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं है तो हम उससे अच्छी तरह निपट लेना जानते हैं। सबेरा......

विद्याभूषण बोले 'नहीं नहीं, मेरा मतलब यह नहीं है। खैर, जाने दो इन बातों को। अब यह बतलाओ कि करना क्या चाहिए।'

दिवाकर बोला 'सवेरे १० बजे की गाड़ी से हम शीला को ले जायेंगे। मैं चाहता हूं कि तुम अपने उस सिरफिरे और शराबी भाई को समझा दो कि वह इसमें किसी प्रकार का रोड़ा न अटकावे।'

विद्याभूषण थोड़ी देर चुप रह कर बोले 'मैं तो यही कोशिश करूंगा, मगर बाणी जरा जिद्दी आदमी है संभव है आपको यह ट्रेन न मिल सके।'

दिवाकर जरा रुक कर बोला 'अच्छी बात है, कल देखा जायगा आप जाकर आराम करें।'

खड़ा होता हुआ विद्याभूषण बोला 'हम तुम दो नहीं हैं दिवाकर। जहाँ तक हो सकेगा इस मामले को निपटाने में मैं पीछे नहीं रहूंगा। बाणी तो अभी लड़का है, उसकी बातों का तुम्हें बुरा न मानना चाहिए।'

दिवाकर चुप रहा। विद्याभूषण चले गये।

उनके जाने के बाद दिवाकर ने कहा 'अब अक्ल ठिकाने पर आ रही है।'

(२३)

सवेरे विद्याभूषण ने आकर कहा 'वाणी तो सवेरा होते ही उठकर चला गया ।'

'तो फिर ।' दिवाकर ने पूछा ।

विद्याभूषण गम्भीर होकर बोले 'मेरी समझ में नहीं आता कि क्या करूं ।'

'हूँ' कह कर दिवाकर कुछ सोचने लगा ।'

विद्याभूषण बोले 'कहो तो मैं उसके पास फिर जाऊं ।'

'और बिना उसके आये आप शीला को विदा न कर सकेंगे कदाचित् । दिवाकर ने पूछा ।'

विद्याभूषण बोले 'हाँ' । बिना उसके आये···

बात काट कर दिवाकर उठ खड़ा हुआ और बोला तो फिर अब आप तकलीफ न करिए मैं अपना काम स्वयं बना लूंगा । उठिए बाबूजी ।

रामशंकर उठ कर खड़े हो गये । दिवाकर उठ कर कपड़े पहिनने लगा ।

विद्याभूषण बोलने लगा 'कब तक लौटोगे दिवाकर ?'

दिवाकर उपेक्षा के भाव से बोला 'कुछ ठीक नहीं है । संभव है अभी ही लौट आऊँ या लौटूं ही नहीं ।'

विद्याभूषण दिवाकर का चेहरा देखकर कुछ डर सा गया बोला 'यदि न हो तो घण्टे दो घण्टे के लिए ठहर जाओ दिवाकर । मैं स्वयं उसे बुलाने जा रहा हूँ ।'

कुछ सोच कर दिवाकर बोला 'अच्छी बात है । आप जाइए उसे बुलाने । मैं भी अभी लौट कर आता हूँ ।'

दिवाकर रामशंकर के साथ चला गया ।

\+ \+ \+

सारी कथा सुनकर बाबू ताराचन्द ने कहा 'तो फिर तुम क्या चाहते हो दिवाकर ? मैं हर तरह से तुम्हारी मदद करूंगा।'

दिवाकर बोला 'हम शीला को साथ ही ले जाना चाहते हैं। ऐसा यदि न हुआ तो उसका जीवन खतरे मे हो सकता है।'

कुछ सोचकर ताराचन्द बोले 'तुम ठीक कहते हो। अच्छा तो फिर चलो।'

ताराचन्द ने अपने साथ एक हैडकॉनिस्टविल तथा ६-७ कॉनिस्टविलों को लिया और दिवाकर तथा रामशंकर को साथ लेकर विद्याभूषण के घर पहुँचे।

वहां पहुँचने पर मालूम हुआ कि विद्याभूषण घर पर नहीं हैं।

ताराचन्द बोले 'रुकूं या कारवाई शुरू करदूँ।'

कुछ सोचकर दिवाकर ने कहा 'घर में मर्द नहीं है मैं अन्दर आपको लिए चलता हूँ। विदूयाभूषण आता ही होगा।'

दिवाकर ताराचन्द को लिए उस कमरे में पहुँचा जहाँ वह ठहरा हुआ था। कॉनिस्टविल बाहर ही रहे।

लगभग आध घण्टे तक प्रतीक्षा करने के बाद ताराचन्द बोले 'अभी तक आया नहीं।'

घड़ी देखकर दिवाकर ने कहा 'और थोड़ा ठहर जाइये। शायद..........

इतने ही में विद्याभूषण कमरे में आ पहुँचा। उसने ताराचन्द को अभिवादन किया।

ताराचन्द ने कहा 'आप ही पं० विदूयाभूषण हैं ?'

'जी' विद्याभूषण ने अदब के साथ उत्तर दिया।

ताराचन्द सिर हिलाते हुए बोले 'वाणीभूषण आपका छोटा भाई है !'

'जी' वह बोला।

'उसे बुलाइये मेरे सामने' ताराचन्द ने आज्ञा देते हुए कहा।

विद्याभूषण क्षण भर तक खड़ा रहा फिर धीरे से बोला 'बहुत अच्छा।'

वह कमरे से बाहर होगया। उसके जाने के बाद ताराचन्द ने कहा 'अभी दिमाग़ दुरुस्त किये देता हूँ हज़रत का।

इतने मे अन्दर से नौकर ने आकर दिवाकर से कहा 'बाबूजी आपको अन्दर बुला रहे हैं।'

दिवाकर ने ताराचन्द की ओर देखा। मुस्कराते हुए ताराचन्द ने कहा जाइये, 'जाइये, बेखटके जाइये।'

दिवाकर विद्याभूषण के कमरे में पहुँचा। वहाँ कुर्सी पर नीचा सिर किये विद्याभूषण अकेले बैठे थे।

दिवाकर को देखते ही उठ खड़े हुए तथा उसका हाथ पकड़ कर बोले 'क्या वाणी को पेश करदूं उनके सामने दिवाकर वह तो बहुत डरा हुआ है।'

मन ही मन मे हंसते हुए दिवाकर ने कहा 'इसमें डरने की क्या बात है! उन्हें सामने आना तो पड़ेगा ही।'

विद्याभूषण अजीजी से बोले 'देखो दिवाकर, लड़ाई झगड़ा तो हुआ ही करता है। इस घर की इज्जत तुम्हारे हाथ है।'

दिवाकर बोला 'घबड़ाओ मत, उसे साथ लेकर फौरन आजाओ। मैं चलता हूँ।'

दिवाकर ताराचन्द के पास आगया। हंसते हुए ताराचंद ने कहा 'मिले कुंवरसाहब?'

दिवाकर ने कहा, आता है यहीं।'

विद्याभूषण के पीछे पीछे डरा हुआ किन्तु भावों पर बल डाले हुए वाणीभूषण कमरे में आकर खड़ा हो होगया।

उसे देखकर ताराचंद ने कहा 'आपका नाम है वाणीभूषण

कुछ हकलाता सा वाणी बोला 'जी जी. मैं वाणीभूषण हूं कहिये ?'

ताराचंद ने कहा 'आप शराब से बहुत शौक करते हैं।'

वह मिटपिटाया । ताराचंद बोले आप शराब पीते हैं ?'

'नहीं—जी वह घबड़ाकर बोला।'

ताराचन्द ज़रा जोर से बोले 'मैं पूछता हूँ कि आप शराब पीते हैं ?'

कुछ संभल कर वह बोला 'जी। कभी-कभी पीता हूँ।'

सिर हिलाते हुए ताराचन्द बोले 'और शराब के नशे में कभी-कभी अपनी औरत पर आप हाथ साफ भी करते हैं ?'

वाणी चुप रहा । ताराचन्द डाँट कर बोले 'चुपचाप सब कुछ बता जाइये जिससे आपको हवालात तक न लेजाना पड़े

वाणी बोला 'जी हाँ, कभी-कभी ऐसा करता हूं।'

हँसकर ताराचन्द ने कहा 'आप दिवाकर को जानते हैं।

धीरे से वह बोला 'हाँ।'

रामशंकर की ओर इशारा करके ताराचन्द ने कहा 'ये कौन हैं आपके ?'

वाणी बोला 'आप हैं मेरे श्वसुर।'

ताराचन्द बोले 'तुम्हें मालूम है आप यहाँ क्यों आये हैं।'

वाणी बोला 'मुझे नहीं मालूम।'

ताराचन्द बोले मैं तुम्हें बताता हूं। आप अपनी लड़की को लेजाने के लिए आये हैं।'

वाणी झट बोल उठा 'मगर वह जाना नहीं चाहती।'

सिर हिलाते हुए ताराचन्द ने कहा 'अच्छी बात है। ज़रा (विद्याभूषण की ओर देख कर) उस लड़की को बुलाइए।

वाणी अन्दर जाने की चेष्टा करता हुआ बोला 'मैं लाता हूँ बुलाकर।'

ताराचन्द् झट बोल उठे 'जी नहीं, आप यहीं ठहरें। आप मेरी हिरासत में हैं। आप ही (विद्याभूषण की ओर देख कर) उसे बुलाकर लाइये जल्दी ।,

धीरे से विद्याभूषण अन्दर चले गये। उनके जाने के बाद ताराचन्द् वाणीभूषण की ओर देखकर बोले 'सुनो जी वाणी-भूषण, मुझे रिपोर्ट मिली है कि तुम अव्वल दर्जे के अबारा ऐयाश शराबी, और बदमाश आदमी हो। तुम खुद दिनभर रंडियों के कमरों में चक्कर लगाते हो और अपनी बीबी को रोज बुरी तरह से पीटते हो। जानते हो इस जुर्म की क्या सजा है ? जिन्दगी भर चक्की पिसवा कर होस दुरुस्त करदूंगा तुम्हारे।'

वाणी हकलाता हुआ सा बोला 'जी-ई-ई मैं-मैं तो····

डाँट कर ताराचन्द् ने कहा 'चुप रहो, बदमाश कहीं का। इस मरतबा दिवाकर बाबू की सिफारिश से छोड़ देता हूं वरना········ ···

इतने में विद्याभूषण शीला को लेकर आगये। ताराचन्द् ने कुर्शी की ओर इशारा करते हुए कहा 'बैठ जाओ बेटी।'

शीला चुपचाप बैठ गई। ताराचन्द ने बड़े स्नेह के साथ पूछा 'तुम अपने बाप के साथ बनारस जाना चाहती हो बेटी ?'

शीला ने सिर हिलाते हुए कहा 'जी हां।'

ताराचन्द् ने कहा 'जाओ अपना सामान बंधवा कर यहाँ ले आओ। मैं तुम्हें अभी भेजदूंगा। और (विद्याभूषण की ओर देख कर) जाइये इसका सारा जेवर और कपड़ा इसके हवाले कीजिए।

'जो हुक्म' कह कर विद्याभूषण धीरे से अन्दर चले गये। उसके जाने के बाद ताराचन्द बोले 'सुनो मिस्टर, अगर तुमने अपना चाल चलन दुरुस्त न किया तो समझ लेना इसी

दिल्ली शहर में मैं भी रहता हूँ। भले आदमी के लड़के हो इसलिए भले आदमी की तरह रहना सीखो। तुम्हारी किस्मत से पढ़ी लिखी और भली औरत मिल गई है, उसकी कदर करो।

वाणी सिर झुकाये सब कुछ सुनता रहा।

थोड़ी देर में विद्याभूषण आये। ताराचन्द ने पूछा 'कितनी देर है।'

विद्याभूषण ने धीरे से कहा 'तैयार हो रहा है।'

'अच्छी बात है, ज़रा नीचे से एक कॉनिस्टविल कीमेज दीजिएगा, ताराचन्द ने कहा।

विद्याभूषण अन्दर चले गये,

कॉनिस्टबिल के आने पर ताराचन्द ने कहा 'जाकर स्टेशन के लिए तांगा ले आओ।

'बहुत अच्छा' कह कर कॉनिस्टविल चला गया।'

ताराचन्द ने दिवाकर से कहा 'कै बजे गाड़ी छूटती है।,

दिवाकर ने कुछ सोचकर कहा 'यहाँ से लखनऊ जाने का इरादा है।'

रामशंकर ने कहा 'हाँ।'

ताराचन्द बोले 'लखनऊ वाली गाड़ी तो १२ बजे छूटती है। अभी काफी वक्त है।'

इतने में शीला कमरे में आगई। पीछे एक नौकर संदूक और बिस्तरा लिए हुए था।

धीरे से विद्याभूषण भी आकर कुर्सी पर बैठ गये।

कॉनिस्टविल ने आकर कहा 'तांगा आ गया हुजूर।'

शीला, दिवाकर, रामशंकर और ताराचन्द मय सामान के उसमें लद गये।

रास्ते में ताराचन्द दिवाकर से बोले 'बड़ी आसानी से काम निकल गया। ये लोग बड़े डरपोश निकले, नहीं तो कुछ झंझट

करना पड़ता।

हंस कर दिवाकर ने कहा 'पुलिस के नाम से बड़े बड़ों के होश उड़ जाते हैं, और फिर तुम कुछ कम कलाबाज थोड़े ही हो ?,

ताराचन्द ने हंस कर जोर से दिवाकर का हाथ पकड़ लिया।

+ + +

उनके चले जाने के बाद छाया ने पति से कहा चली तो गई हैं रानी' अब जब इस घर में फिर घुसेंगी तो मालूम पड़ेगा।'

विद्याभूषण सिर नीचा किये बैठे थे। वाणी अपने कमरे में जाकर लेट गया था।

छाया फिर बोली क्या हमको लड़कियाँ नहीं मिलेंगी अपने वाणी के लिए। मैं तो अब उसका दूसरा ब्याह करके छोड़ूँगी।

(२४)

शीला बोली 'मैं इसे आपकी गलती नहीं, किन्तु अपना दुर्भाग्य समझती हूं।'

दिवाकर चुप था। शीला कहती गई 'खैर जो हुआ सो हुआ, किन्तु मैं बनारस तक जाऊंगी जब आप अपना विवाह करने को तैयार हो जायेंगे।'

दिवाकर हंस दिया ! बोला 'मैं क्यों विवाह करूं। मुझे तो कोई आवश्यकता मालूम नहीं पड़ती।'

बुआजी आकर बोलीं 'खाना-वाना भी खाओगे या बात ही करते रहोगे दिवाकर ? बात करने को बहुत वक्त मिलेगा।'

दिवाकर बोला 'अभी आता हूँ।'

बुआजी चली गईं। इधर जब से शीला को लेकर दिवाकर आया है तब से बुआजी उससे कुछ नाराज हैं। बात है शीला से बातें करते दिवाकर नहीं अघाता। दिन भर कमरे में बैठे-बैठे दोनों बातें करते रहते हैं। बुआ जी को यह बात पसंद नहीं है। दो स्त्री—पुरुषों का दिन-रात इतने निकट और अकेले रहना ठीक बात नहीं है।

रामशंकर शीला को छोड़कर उसी दिन बनारस चले गये थे। ५–७ दिन में सुरेश सुधाकर को लेकर आयेगा और शीला को ले जायगा शीला ने भी कुछ दिनों के लिए लखनऊ में ही रहना तय किया।

दिवाकर शीला के आजाने से प्रसन्न था। बहुत दिनों बाद वह थोड़ा बहुत सुखी हुआ था दिन रात शीला के साथ रहता और शीला को प्रसन्न करने की चेष्टा किया करता। शीला भी अब कुछ कुछ प्रसन्न रहने लगी थी। किन्तु ३–४ दिन बाद दिवाकर सोचने लगा कि शीला के चले जाने के बाद क्या होगा वास्तव में अब उसने अनुभव किया कि वह शीला के साथ कितना सुखी होगा, किन्तु अब उसे क्या ? फिर उपाय।

शीला उसके पीछे पड़ी थी कि वह अपना विवाह करले किन्तु दिवाकर बराबर इस बात को हँसकर टाल देता। वह चाहती थी कि दिवाकर किसी प्रकार प्रसन्न रहे।

शीला बोली 'दो तीन दिन में चली जाऊंगी फिर क्या होगा ?'

हँसकर दिवाकर बोला 'तो क्या होगा ? अपने राम का तो फक्कड़ों का सा जीवन है। वही चलेगा।'

शीला जरा गम्भीर होकर बोली 'आपकी इस बिचित्रता को मैं आपकी नादानी ही समझूंगी। इस प्रकार एक के बाद दूसरी भूल करके आप····

वह चुप हो गई। दिवाकर अब कुछ गम्भीर हो चला था। शीला भी समझती है कि मैं जीवन भर भूलें ही करती आयी हूं।

शीला फिर बोली 'आप अपने स्वभाव के कारण ही कष्ट उठाते आरहे हैं। यह आपकी कोरी भावुकता ही है और कुछ नहीं।'

दिवाकर का मुंह खुला हो सकता है कि इन सारी भूलों का उत्तरदायित्व मेरी भावुकता ही पर हो किन्तु इसके अतिरिक्त कुछ और भी है शीला जिसका उतरदायित्व किसी और पर भी हो सकता है।

शीला सिर हिलाते हुए बोली 'यह मानने के लिये मैं तैयार नहीं हूँ। आपका चित्त दुखाने के लिये मैं कुछ कहना नहीं चाहती किन्तु यह अवश्य कहूँगी कि इन सब बातों में आपने अपनी कुछ अधिक बुद्धिमत्ता से काम नहीं लिया। इसका दोष आप पर अवश्य है।'

दिवाकर कुछ देर बाद धीरे से बोला 'भगवान् जाने दोषी कौन है, किन्तु इतना जरूर कह सकता हूँ मैं स्वयं अन्धकार में हूं कि दोषी कौन है? मैं तो यह देख रहा हूं कि संसार में प्रति दिन ऐसे असंख्य कार्य होते हैं कि जिसका दोष किन पर है यह कोई नहीं बता सकता। मैं कहता हूँ कि तुम्हारी जैसी गुणवती स्त्री का वाणी जैसे नराधम को विवाह होगया इसका दोष किस पर? और........

शीला जल्दी से कह पड़ी 'यदि आप बुरा न मानें तो मैं कह सकती हूं कि आप पर।'

दिवाकर इसी उत्तर की आशा करता था किन्तु उसके पास प्रत्युत्तर भी था। बोला 'ठीक है, किन्तु कदाचित तुम्हें नहीं मालूम कि मैंने ऐसा क्यों किया? तुम्हें मालूम ही है कि मेरा

और उर्मिला का विवाह सुख-प्रद न हो सका । इस अनमेल विवाह का दोष किस पर है क्या तुम बता सकोगी ?'

शीला इस प्रश्न के लिए तैयार न थी । थोड़ी देर बाद बोली 'इसका भी दोष आप पर ही रक्खा जा सकता है आप को विवाह न करने की स्वतन्त्रता थी कदाचित् ।'

दिवाकर मुसकराया । बोला 'तुम्हें कदाचित मालूम है कि रामनारायण जी अपनी बहिन रमा का विवाह मुझसे करना चाहते थे । तुम्हें बता दूं शीला कि मेरा और रमा का विवाह सभी दृष्टिकोण से सन्तोषपूर्ण होता । इस विवाह के न होने का दोष किस पर है ?'

शीला को भली भांति यह कथा न मालूम थी, बोली 'यदि वे रमा का विवाह करने को आपके साथ तैयार थे तो फिर ऐसा न करने का दोष आप ही पर रक्खा जायगा ।'

हंस कर दिवाकर बोला 'ठीक हैं, और तुम्हारे साथ भी मैं विवाह करने के लिए तैयार न था । बाद में ऐसा करने का दोष तो मुझ पर होगा ही ?

शीला दृढ़ता के साथ बोली 'निस्सन्देह ।'

दिवाकर हंसकर चुप हो गया । शीला बोली 'आपने अपना जीवन भी नष्ट किया और मेरा भी । क्या कहूँ यदि····

दिवाकर बोल उठा 'ठीक ही कह रही हो, मैं स्वयं मानता हूँ कि सारा दोष मेरा ही है, किन्तु मेरे हृदय में बार बार यह प्रश्न उठता है कि आखिर मैंने यह सब क्यों किया । इस प्रश्न के उत्तर के लिये ही मैं तुम्हारी सहायता चाहता हूं शीला ?'

शीला बोली 'किन्तु मैं क्या बता सकती हूं । हाँ, मैं किसी काम के लिये आपको विवश न कर सकती थी । मेरा जोर ही क्या था ?'

दिवाकर बोला 'खेद है कि तुमने अभी तक मेरा अभिप्राय

नहीं समझा शीला। मैं यह जानना चाहता था मैंने ऐसा क्यों किया। कोई भी कार्य, कोई भी व्यक्ति सकारण करता है और विशेष रूप से वह व्यक्ति जिसे लोग पढ़ा लिखा और समझदार समझते हैं।'

शीला कुछ समझी नहीं। बोली 'तो फिर आप ही बतलायें।'

मुस्करा कर दिवाकर बोला 'तुम यह तो न समझोगी कि मैं अपना दोष दूसरे पर मढ़ना चाहता हूं।'

शीला सूखी सी हंसी हंसकर बोली 'नहीं'।

क्षण भर चुप रह कर तथा कुछ गम्भीर होकर दिवाकर बोला 'इसका कुछ-कुछ दोष समाज पर भी है शीला।'

शीला बोल उठी 'क्षमा कीजियेगा, इस सम्बन्ध में समाज ने तो किसी भी प्रकार का प्रतिबन्ध हमारे ऊपर नहीं लगाया है।'

सिर हिलाकर दिवाकर बोला 'तुम ठीक कह रहो हो, किन्तु यदि होता तो ?'

तो उसी समय तोड़ कर टुकड़े-टुकड़े कर देना चाहिये था, शीला ने दृढ़ता से कहा। दिवाकर मुस्कराया। शीला ने कहा मैं आपसे पूछती हूं, कि आपने अपनी पसंद से उर्मिला बहिन से विवाह किया। इसमें समाज का क्या दोष है ?"

दिवाकर सिर तान कर बोला 'क्यों नहीं है ? मेरे पिताजी आवश्यकता से अधिक समझदार थे। उन्होंने तुम्हारे पिता से स्पष्ट कह दिया था कि मैं सब कुछ दिवाकर पर छोड़ता हूँ। वे जानते थे मेरा पुत्र पढ़ी लिखी भार्या चाहता है किन्तु तुम्हारे पिता ने इस विषय को अधिक महत्व न देकर विवाह की जिद की। तुम्हें मालूम है कि पहले मैंने विवाह से इन्कार कर दिया था यह दोष तो हमारे और तुम्हारे पिताओं का है जिन्होंने

इस विषय को अधिक महत्व नहीं दिया। मैं तो अल्हड़ ठहरा, किसी भी सुन्दरी युवती को अपनी बनाने के लिए तैयार हो उठता।'

शीला बोली मैं यह तो मानती हूँ कि उन्हें सोच समझ कर कार्य करना चाहिये था।'

दिवाकर हँसकर बोला 'फिर तुमने सारा दोष मेरे ऊपर कैसे रख दिया? और फिर तुम्हारे पिता को उर्मिला को शिक्षित भी तो बनाना चाहिये था।'

शीला चुप रही। दिवाकर ने हँसकर कहा 'एक दोष तो मुझ पर से हटा, अब आगे चलो।'

शीला बोली 'किन्तु इसके बाद तो आप मुझसे विवाह करने के लिए स्वतन्त्र थे।'

दिवाकर बोला 'तुम बिलकुल ठीक कह रही हो शीला। मैं दोषी अवश्य हूं किन्तु मेरी इस भूल को तुम्हारे अभिमान ने साकार बना दिया। यदि बनारस में मेरे प्रति तुम्हारा व्यवहार एकाएक इतना शुष्क न होता तो कदाचित्........।'

बात काटकर शीला बोल उठी 'तो क्या आप मुझसे विवाह कर लेते?'

'हाँ, निश्चित रूप से कम से कम वह राक्षस-मंडली जो तुम्हारे विवाह के लिए आई थी उसे देखकर तो मैं अवश्य तैयार हो जाता, किन्तु तुम्हारा रुख देख कर मेरा साहस न पड़ा।'

शीला चुप थी। दिवाकर कहता गया और तुम्हारे साथ अपने सम्बन्ध निश्चित समझने ही से मैंने रामनारायण जी को निराश किया। इससे तुम समझ सकती हो मैंने तुम्हारे साथ विवाह करने का निश्चय ही कर लिया था।

शीला धीरे से बोली 'किन्तु मुझसे विवाह न करने का

फिर कारण ?"

दिवाकर ने उसे उर्मिला के पत्र का सारा हाल बतला दिया। शीला बोली 'यह सब मेरा दुर्भाग्य है, नहीं तो मैं जानती थी कि जीजी ने वह पत्र क्यों लिखा था। एक बार उन्हें यह संदेह हो गया था कि मैं आपके अधिक निकट होती जा रही हूं। इस बात को लेकर उन्होंने मुझे आगाह करने के लिए वह पत्र लिखा और ऐसे स्थान पर रख दिया था कि मैं उसे पढ़ सकूं जिससे आपके प्रति मेरे विचार बदल जायं। यदि ऐसा न होता तो वे मरते समय मुझे आपके हाथ में क्यों सौंप जाती।"

दिवाकर शीला का मुँह देखने लगा। शीला बोली 'कदाचित् आपको मेरी बात का विश्वास नहीं हुआ था। आपने कदाचित् यह समझा कि मैं आपके साथ विवाह करने की लालच से बनाकर बात कह रही हूँ।"

दिवाकर के मुंह से निकला "तुम ठीक कह रही हो शीला। इसमें मेरा ही दोष है।"

शीला जरा और गम्भीर होकर बोली 'जो हो गया सो हो गया। अब मैं बतलाती हूं कि दोष किसका है? वास्तव में हम और आप दोनों ही निर्दोष हैं। दोष किसी का है अवश्य किन्तु हम समझ नहीं पा रहे हैं कि दोषी कौन है? कहीं पर दोष है अवश्य। संभव है वह समाज का हो किन्तु साथ ही साथ यह भी कहना पड़ेगा कि ऐसे मामलों में दोष व्यक्ति का भी होता है हमारी मनोवृत्तियां और स्वभाव भी इसका उत्तरदायी है।"

दिवाकर बोला 'तुम कुछ-कुछ ठीक ही कह रही हो, किन्तु क्या उस दोष को मिटाया नहीं जा सकता? भूल का सुधार क्या असंभव है।"

शीला बोली 'संसार में कुछ भी असंभव नहीं है। कभी

कभी भूलों का प्रतिकार अवश्य असंभव हो जाता है।"

दिवाकर बोला 'मैं यह नहीं मानता शीला। प्रत्येक भूल का प्रतिकार हो सकता है यदि कोई उस विषय में गम्भीरता से काम ले।'

शीला बोली 'कदाचित ऐसा ही हो।'

दिवाकर बोला 'मैं यह कहता हूँ कि तुम्हारे प्रति जो मैंने भूल की है उसे क्या हम सुधार नहीं सकते ?'

शीला आश्चर्य की मुद्रा में बोली 'इसका अर्थ ?'

क्षण भर चुप रह कर दिवाकर बोला 'यह निश्चित है कि अब तुम्हारे लिए दिल्ली में स्थान नहीं।'

शीला चुप रही।

दिवाकर उसके मुंह की ओर देखकर बोला 'तब तुम्हारा क्या विचार है ?'

शीला बोली 'आप क्या करने को कहते हैं ?'

क्षण भर चुप रह कर दिवाकर बोला 'क्या हम लोग अब अपना विवाह······

बात काट कर शीला बोली 'यह असंभव है अब ! बिल्कुल असंभव।'

दिवाकर चुप हो गया। शीला बोली 'एक पति के होते हुए अब क्या आप मुझे फिर विवाह करने की सलाह देते हैं।'

दिवाकर चुप रहा। शीला बोली 'मैं कदाचित् इतना आगे नहीं बढ़ सकती। इसी प्रकार जीवन व्यतीत करके देखूंगी कि क्या होता है।'

दिवाकर अब बोला 'यह भी एक भूल हो सकती है शीला।'

शीला ने कहा 'यह हमारी भूल का परिणाम है। हमको उसे सहन करना चाहिये। इसे मैंने अभिशापित जीवन मान लिया है।

हंसकर दिवाकर ने कहा 'कदाचित् इसका दोष तो मुझ पर न रहेगा।,

शीला कुछ बोली नहीं।

(२५)

सुरेश आकर शीला को बनारस लिवा ले गया। जाते वक्त शीला रो पड़ी किन्तु वह दिवाकर को दूसरा विवाह करने पर राजी न कर सकी।

शीला के चले जाने से बुआ जी ने शांति की सांस ली। वे सीधी सादी, धार्मिक विचार की थीं, अतएव इस प्रकार की बातों को पसन्द न करती थीं।

दो तीन दिन बाद उन्होंने दिवाकर से कहा 'यदि ऐसा ही है तो तू विवाह क्यों नहीं कर लेता दिवारक ?'

हस कर दिवाकर ने कहा 'कैसा है बुआजी।'

बुआजी बोलीं 'मर्द-मानुस कहीं बिना विवाह के रह सकते हैं ? तू तो समझता नहीं है।'

मगर बुआजी को क्या मालूम कि दिवाकर वह सब कुछ भी समझता है जो बुआजी के मन के अन्दर है। बोला 'अच्छा सोचूंगा।'

बुआजी चुप हो गईं।

यहाँ बनारस आकर शीला ने भी दिवाकर के प्रस्ताव पर फिर गम्भीर रूप से विचार किया अन्त में उसके मुँह से निकला नहीं, ऐसा तो असंभव है।

१५-२० दिन बाद उसे जिठानी का एक पत्र मिला। उसमें उसने लिखा था वाणी की तबियत बहुत खराब है। पत्र पाते ही चली आओ। तबियत संभलने के बाद लौट जाना।'

शीला ने पत्र मा को दिखाया । मा मुंह बनाकर बोली "मरने दो । ऐसे नीच को कुछ सजा भी मिलनी चाहिये !"

न जाने क्यों शीला को माँ की यह बात कुछ अधिक अच्छी नहीं लगी । वह चुपचाप उठकर चली गई ।

शीला ने पत्र का उत्तर नहीं दिया, किन्तु रह रह कर उसके मुंह पर एक चिन्ता सी छा जाती थी । एक दिन अचानक मा के सामने उसके मुंह से निकल पड़ा 'फिर कुछ हाल नहीं मिला ।'

मा मुंह बना कर के बोली 'तू व्यर्थ के लिए चिन्ता करती है शीला । यह तो तुझे फिर बुलाने की चाल है । मैं ऐसी बातों मे नहीं आती ।

शीला चुप रही । उसने भी सोचा कि यह चाल भी हो सकती है ।

\+ + + +

और वास्तव में छाया ने जिस समय शीला को ऐसा पत्र लिखा था उस समय वाणीभूषण आनन्द से होस्टल में अच्छा भला सो रहा था । किन्तु कभी कभी झूट बात भी सच होकर ही रहती है । दूसरे ही दिन को ज्वर हो आया । विश्वाभूषण उसे जाकर घर लिवा लाये । डाक्टरों ने परीक्षा की । वाणी टाईफाइड होगया था ।

वाणी की हालत गिरती देखकर विश्वाभूषण घबड़ाये । छाया ने कहा 'इनके पास तो दिन रात किसी के बैठने की ज़रूरत है । मुझे घर देखना पड़ता है और तुम्हें दफ्तर । फिर कौन इनकी सेवा करेगा ।'

विश्वाभूषण ने कहा 'तो फिर क्या एक नर्स रख दूं ? हालत तो ठीक नहीं है ।'

छाया मुंह बना कर बोली 'अपने का तो नर्स रखने का बूता है नहीं । बनारस जाकर महारानीजी को क्यों नहीं लिवा लाते हो ? आकर देखें भालें ।'

कुछ सोच कर विद्याभूषण ने कहा 'मैं वहाँ गया और उन्होंने यदि न भेजा तो ?'

छाया बोली 'तो क्या खसम की बीमारी में भी न आयेंगी बीबीजी ।'

विद्याभूषण बोले 'न हो तो एक चिट्ठी भेज दो तुम । अगर आना चाहे तो मैं जाकर लिवा लाऊँ ।'

छाया बोली 'लाओ चाहे न लाओ, लेकिन मेरे भरोसे न रहना । मुझे तो उसके पास बैठते ही डर लगता है बाबा । खैर, चिट्ठी मैं डाल दूँगी ।'

और चिट्ठी तो छाया बीमार होने के एक दो दिन पहिले ही डाल चुकी थी । उसने फिर चिट्ठी न लिखी ।

वाणी की हालत दिन पर दिन गिरती ही गई । छाया उसके पास तक न जाती थी । दिन भर पानी के लिए चिल्लाया करता किन्तु छाया उधर भूल के भी न जाती । जब शाम को विद्याभूषण आते तो बेचारे ६ बजे से १२ बजे तक उसके सिरहाने बैठते । वाणी शिकायत करता और विद्याभूषण झुंझला उठता किन्तु छाया से कुछ न कह पाता ।

डाक्टर ने कहा 'रोगी की हालत खराब है । अगर ठीक से उपचार न हुआ तो भगवान् ही मालिक है ।'

विद्याभूषण रो पड़े । डाक्टर ने कहा 'इनकी वाइफ कहाँ हैं ? क्या आपने उन्हें खबर नहीं दी ?'

विद्याभूषण ने कहा 'खबर तो दे दी है । यदि आप दो दिन के लिये कोई नर्स का प्रबन्ध करदें तो मैं उसे लिवा लाऊं ।'

डाक्टर कुछ सोचकर बोले 'आप आज ही चले जायें । मैं इन्तजाम करूंगा ।'

छाया ने जो सुना तो बोली 'मैं अकेले कैसे रहूँगी ? खिझला कर विद्याभूषण ने कहा 'तो फिर क्या करूं ? क्या उसे मार डालूं ?'

छाया छनक कर बोली 'तो क्या मैं तुम्हारे भाई का मरना चाहती हूँ ? हाँ, मरने वाले को रोक कौन लेगा ? क्या बनारस से आकर वे ही रोक लेंगी ?'

विद्याभूषण कुछ बोले नहीं। सवेरे उठ कर ज्योंही वे स्टेशन जाने को तैयार हुए त्योंही एक व्यक्ति ने आकर कहा 'मैं डा० गुप्ता का कम्पाउण्डर हूँ। उन्होंने आपके यहाँ मेरी ड्यूटी लगा दी है।'

विद्याभूषण ने शान्ति की सांस ली। वे बनारस चल दिए।

(२६)

रामशंकर ने कहा 'मरने दीजिये उस बदमाश को। मेरा उससे कोई सम्बन्ध नहीं है।'

विद्‌याभूषण ने रोते हुए रामशंकर के पैर पकड़ लिये और बोले 'आप बड़े हैं। मैं पैर पकड़ कर आपसे क्षमा मांगता हूँ।'

रामशंकर का क्रोध कुछ कम हुआ। वे बोले 'क्षमा तो आप लोगों को ईश्वर करेगा। मैं कौन हूँ ?'

विद्‌याभूषण ने कहा 'आपके अपराधी तो हम हैं। यदि आपने बहू को न भेजा तो बाणी का बचना मुश्किल है।'

रामशंकर बोले 'तो यह कहिए कि सेवा के लिए नौकरानी की जरूरत पड़ी है।'

विद्‌याभूषण मौन होकर आँसू बहाते रहे।

रामशंकर बोले 'देखिये साहब, मैं बहुत साफ आदमी हूँ। अपनी ओर से तो मैं जीवन रहते शीला को वहाँ जाने की आज्ञा न दूंगा। उससे आप पूछ लें, यदि वही जाना चाहे तो दूसरी बात है।'

विद्याभूषण ने कहा 'मगर बिना आपकी आज्ञा के······

रामशंकर बोल उठे 'सो मैं तो कभी आज्ञा न दूंगा। मैं दृढ़ प्रतिज्ञ हूं। इसके अतिरिक्त बिना दिवाकर की सलाह के तो

यह असम्भव ही है ।'

विद्याभूषण ने कहा 'अब मेरे पास समय नहीं है, नहीं तो मैं दिवाकर को भी जाकर ले आता ।'

रामशंकर कुछ बोले नहीं । विद्याभूषण भी चुप बैठे रहे ।

थोड़ी देर म अचानक शीला बाहर आकर खड़ी हो गई और बोली 'चलिये मैं चल रही हूँ ।'

विद्याभूषण रामशंकर की ओर देखने लगे । रामशंकर कुछ बोले नहीं ।

शीला बोली 'उठिये भाई जी मुझे पहिली ही ट्रेन से जाना है । देर करने से गाड़ी छूट गई तो ।

विद्याभूषण उठ कर खड़े हो गये । शीला उनकेसाथ चली गई ।

उसके जाने के बाद रामशंकर ने अपने आँसू पोंछ लिए ।

\+ + + +

जिस समय विद्याभूषण शीला को लेकर पहुँचे उस समय डाक्टर साहब घर में ही मौजूद थे । विद्याभूषण ने पूछा 'कैसी तबियत है डाक्टर साहब ।'

डाक्टर बोले 'घबड़ाने की कोई बात नहीं है तबियत कुछ संभली हुई है ।'

विद्याभूषण ने शान्ति की सांस ली । शीला जाकर सिरहाने बैठ गई और 'यू डी कोलोन की पट्टी माथे पर रखने लगी । बुखार काफी तेज था ।

अन्दर आने पर विद्याभूषण को मालूम हुआ कि छाया उसी दिन अपनी मा के घर मेरठ चली गई । विद्याभूषण चुप रहे । उन्होंने इसे भी अच्छा ही समझा ।

विद्याभूषण ने भी दफ्तर से छुट्टी ले ली । शीला ने जी तोड़ कर पति की सेवा की ।

पहिले तो ३-४ दिन तक उसकी दशा सुधरती ही गई किन्तु एकाएक चौथे दिन हालत बहुत खराब हो गई ।

डाक्टर ने देख कर कहा 'हालत खतरनाक है।'

और शाम होते होते रोगी ने सदैव के लिए आँखे मूंद लीं

शीला पत्थर-सी खड़ी रह गई। वह यह निश्चित ही न कर सकी कि वह क्या करे? वह रोई नहीं।

सब कुछ समाप्त हो जाने पर विद्याभूषण ने शीला से कहा 'हम तुम्हें बनारस पहुँचा देने के लिए तैयार हैं बहू। तुम्हारी जब इच्छा हो तब जा सकती हो।'

छाया मृत्यु का समाचार पाकर आगई थी। बोली 'अभी क्या जाकर करेगी। कम से कम महीना तो पूरा हो जाय।'

उसकी बात अनसुनी-सी करते हुए विद्याभूषण ने कहा 'कल पहुँचा दूं तुम्हें बहू?'

शीला धीरे बोली 'चली जाऊंगी। अभी जल्दी क्या है।'

विद्याभूषण आँसू पोंछते हुए बाहर चले गये।

छाया अपने स्वभाव से मजबूर थी। उसने समय-समय कटु-वाक्य शीला को सुनाना प्रारम्भ कर दिया था, किन्तु शीला को तो वहाँ एक महीना पूरा करना था वह चुप ही रहती।

महीना पूरा होते ही शीला बनारस चली गई।

उसके जाने के बाद छाया के मुँह से निकला 'उसे तो दिवाकर से मिलने की जल्दी पड़ी थी। नाम करेगी महारानी जी।'

जब विद्याभूषण उसे पहुँचा कर लौटे तो वह बोली 'पहुँचा आये धनवन्तर जी को। आकर बचा न लिया खसम को।'

विद्याभूषण कुछ बोला नहीं।

(२७)

शीला के बनारस आ जाने पर समवेदना प्रकट करने के लिए दिवाकर वहाँ पहुँचा। शीला सूखी हँसी हँस कर बोली 'यह शिष्टाचार क्यों जीजाजी! मैं तो जैसी पहिले थी अब भी वैसी ही हूँ। अपना जो कुछ कर्तव्य था वह दिल्ली जाकर पूरा

कर दिया।'

दिवाकर चुप रहा। शीला बोली "सुधाकर को नहीं लाये ?"

दिवाकर बोला 'वह स्कूल छोड़ कर नहीं आया।'

शीला बोली 'आप तो अब कुछ दिन यहाँ रहेंगे न ?'

हंसकर दिवाकर ने कहा 'जैसी तुम्हारी आज्ञा हो।'

शीला बोली 'आज्ञा देने वाला तो आपके लिए कोई नहीं है। ब्याह करने से आप घबड़ाते हैं।'

दिवाकर हंस कर बोला "अपनी लड़की ही कोई मुझे नहीं देना चाहता।"

दिवाकर कई दिन तक बनारस में रहा। जाने के एक दिन पहिले रामशंकर ने उससे कहा 'शीला के विषय में अब क्या सलाह देते हो दिवाकर ?'

आश्चर्य के साथ दिवाकर ने कहा 'कैसी सलाह ?'

रामशंकर ने कहा 'सुनो दिवाकर, मैं शीला का विधवा-विवाह कर देना चाहता हूं। कोई लड़का यदि तैयार हो तो मैं बातचीत करूं।'

दिवाकर ने धीरे से कहा 'शीला से सलाह लेली है आपने ;'

रामशंकर ने कहा 'हमारी शीला मूर्ख नहीं है वह राजी हो जायगी।'

दिवाकर चुप रहा।

उसी दिन रात के वक्त दिवाकर ने शीला से कहा 'अब क्या इरादा है तुम्हारा ?'

शीला ने कहा 'कैसा इरादा ;,

दिवाकर बोला 'बाबूजी का इरादा तुम्हारा विवाह कर देने का है।'

शीला क्षण भर चुप रह कर बोली 'मुझसे तो उन्होंने पूछा नहीं।'

दिवाकर बोला 'कदाचित वे इसकी आवश्यकता नहीं

समझते ।,

शीला चुप रही। दिवाकर बोला 'मैं तुमसे यह कह कर लखनऊ जाना चाहता हूं। कि यदि तुम्हारा ऐसा इरादा हो तो मैं भी बाहर नहीं हूं। यदि तय कर सको तो मुझे पत्र लिख देना।'

कुछ सोचकर शीला बोली 'इसकी संभावना नहीं है। यह असंभव है।

दिवाकर का हृदय आज रोष से भर गया, किन्तु मन ही मन उसे दबा कर वह बोला 'अपनी भूल को तुम स्वयं समझ सकती हो। दिवाकर दोषी न ठहराया जा सकेगा।'

और वह चल दिया।

\+ + +

लगभग दो मास बाद उसे शीला का पत्र मिला। उसमें लिखा था:—

प्रिय जीजाजी,

न जाने क्यों मैं निर्णय न कर सकी। बाबूजी ने मुझे बहुत समझाया किन्तु न जाने क्यों मैं अपना इरादा न बदल सकी।

मैं नहीं जानती कि इसका दोष मैं किस पर रक्खूँ ? मैं जानती हूँ कि ठीक वही है जो आप कह रहे हैं या जो बाबूजी करना चाहते हैं। मैं जानती हूँ कि ऐसे सामाजिक—बन्धनों को तोड़ देना चाहिए, मैं स्वतन्त्र भी हूँ और उन्हें तोड़ भी देना चाहती हूँ, किन्तु न जाने क्यों मेरा ऐसा साहस क्यों नहीं होता।

मैं किसे दोष दूँ यह नहीं जानती।

आशा है आप क्षमा करेंगे।

शीला

दिवाकर ने उसे उत्तर दिया:—

प्रिय शीला,

मैं लिखना नहीं चाहता था किन्तु लिखना पड़ा। जो कुछ